॥ हरिः ॐ ॥

दुर्लभ मानवदेह
श्रीमोटा की दृष्टि में

॥ हरिः ॐ ॥

दुर्लभ मानवदेह श्रीमोटा की दृष्टि में

संकलनकर्ता

श्री बाबूभाई रामी

संपादक

डॉ. कान्तिभाई नावडिया

अनुवाद

डॉ. कविता शर्मा 'जदली'

प्रकाशक

हरिः ॐ आश्रम, सुरत

॥ हरिः ॐ ॥

संकलनकर्ता : श्री बाबूभाई रामी

संपादक : डॉ. कान्तिभाई नावडिया

प्रकाशक : हरिः ॐ आश्रम, सुरत

संस्करण : प्रथम २०१३ प्रतियाँ : १०००

मूल्य : रू. २५/-

© हरिः ॐ आश्रम, सुरत - नडियाद

: प्राप्तिस्थान :

हरिः ॐ आश्रम
कुरुक्षेत्र महादेव मंदिर
के बाज्जु में, जहाँगीरपुरा,
सुरत-३७५००५
दूरभाष : (०२६१) २७६५५६४, २७७१०४६

हरिः ॐ आश्रम
शेढी नदी तट, पो. बीलोदरा
नडियाद, पो.बो. ७४
दूरभाष : ९०२६८) २५६७७९४

Website : www.hariommota.org

e-mail : hariommota1@gmail.com

अक्षरांकन : हरिः ॐ ग्राफिक्स
दूरभाष : (०७९) २६७६७१८१

॥ हरिः ॐ ॥

मुझे चेतनाशील समाज का निर्माण करना है

– मोटा

हमारे देश में, हमारे समाज में यदि मर्दानगी, साहस, हिंमत नहीं होगी तो हमारा देश चेतनाशील कैसे बन पाएगा ?

समाज में गुण और भावना का अकाल पड़ा है उसके निवारण के लिए प्रयत्न करना ही समाज की सच्ची सेवा है ।

आज देश में धर्म जीवित नहीं है, यदि वह जीवित होता तो लोगों में देश-प्रेम, शौर्य, सहिष्णुता, प्रामाणिकता, त्याग, संगठन, साहस, एकता, सहृदयता आदि भाव दीखते । समाज में गुण और भावना पैदा हुए बिना धर्म नहीं टिक सकता ।

इसलिए मौलिक काम ही करें । अनुभवी व्यक्ति हमेशा मौलिक काम ही करता है । किन्तु अब तो सबकुछ यंत्रवत् ही है । फिर, समाज कैसे ऊपर उठ सकता है ?

जब पंचमहाभूतों से बना स्थूल शरीर का नाश होता है, तब सूक्ष्म शरीर भी चला जाता है, उसके साथ गुण और भाव दूसरे जन्म में भी जाते हैं । इससे गुण-भाव विकास की प्रवृत्तिओं का दान ही सच्चा श्रेष्ठ दान है ।

लक्ष्मीवंतों के पास गुण-भाव न होंगे तो वे स्वच्छन्दी हो जाएँगे । इससे लक्ष्मी का दुरुपयोग होने ही वाला है ।

लक्ष्मी, माता है । लक्ष्मी के साथ किया दुर्व्यवहार माता के साथ किया व्यभिचार के समान है ।

गुण और भाव के बिना धर्म संभव नहीं ।

इसलिए परमार्थ ऐसा करो कि जिससे समाज चेतनाशील हो सके । समाज चेतनाशील हो सके ऐसी प्रवृत्तियों की आज आवश्यकता है ।

यह समाज कब्रों को पूजनेवाला है ।

–मोटा

हरिः ॐ

संपादकीय

इस सृष्टि में मनुष्य रूप में अवतरित होना, हमारे सद्‌भाग्य की परिसीमा है क्योंकि अन्य सभी सजीवों से मानव में एक विशिष्ट तत्त्व है बुद्धि का । जिससे वह अन्य सभी सजीवों पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर पाया है । अनेक बार हीरों की पहचान न होने के कारण उन्हें पत्थर मानकर फेंक देनेवाले मनुष्यों का मिलना कठिन नहीं हैं । उसी तरह उत्तम मनुष्य जन्म प्राप्त होने की पहचान न होने से वह पशु की तरह जीवन नष्ट कर डालता है, यह बड़े दुर्भाग्य की बात है ।

पूज्य मोटा मानवशरीर के दो स्वरूप बतलाते हैं, स्थूल शरीर और सूक्ष्म शरीर । स्थूल शरीर अर्थात् मानवदेह का बाह्य स्वरूप-उसका स्वरूप, पाचनतंत्र, मज्जातंत्र आदि । इन सभी के कारण मनुष्य अपनी दैनिक क्रियाएँ करता है, व्यावहारिक काम करता है और मुक्त रूप से जी सकता है । परन्तु मनुष्य का सूक्ष्म देह इससे भी अधिक महत्वपूर्ण है । इस देह द्वारा वह अपने आंतरिक विकास को विकसित कर सकता है । 'मनुष्य में मन, बुद्धि, प्राण, चित्त और अहम् हैं । प्राणिओं में बुद्धि, मन विकसित नहीं... मनुष्य ही ऐसा प्राणी है, जिसकी बुद्धि, चित्त, प्राण का विकास हुआ है ।' (पूज्य श्रीमोटा)

पूज्य श्रीमोटा कहते हैं, 'इस शरीर में पाँच तत्त्व, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और पाँच करण हैं । इन सब पर मनुष्य चाहे तो अपने पर नियंत्रण पा सकता है । इसके लिए अभ्यास करना पड़ेगा । इस अभ्यास द्वारा ही चेतना प्राप्ति की संभावना है । जिसकी चेतना जागृत होती है, वह साधनापथ का अधिकारी बन

सकता है। परन्तु साधना के क्षेत्र में शरीर का ममत्व और उलझनों का टूटना यह अत्यधिक कठिन है। साधनापथ में आगे बढ़ने के बाद मनुष्य नर से नारायण बनने की प्रवृत्ति में मानसिक रूप से जुड़ा रहता है।

मनुष्यदेह प्राप्त हो तभी आध्यात्मिकता की पगडंडी पर आगे बढ़कर जीवात्मा उच्च दशा को प्राप्त कर सकती है। इस प्रकार देखें तो इस मनुष्यदेह को केवल भौतिक सुख-सुविधा और तुच्छ विषयों को प्राप्त करने में नष्ट करने की अपेक्षा मनुष्य को आत्मोन्नति की दिशा में आगे बढ़ना आवश्यक है।

चिंतनगर्भ जैसी ये विचार सूत्र हीरे से भी अधिक तेजस्वी हैं। सूक्ष्मदेह को प्रदीप्त करने से स्थूल देह अपनेआप दीप्त हो जाएगा।

पूज्य श्रीमोटा के मनुष्यदेह विषयक विचार भिन्न-भिन्न पुस्तकों से एकत्र करके श्री बाबुभाई रामी ने यहाँ संकलित किये हैं। इन विचारों का नित्य पठन और नित्य मनन किया जाय तो मनुष्य को एक सज्जन के रूप में जीने के लिए चिंतन रूपी खुराक मिल जाएगी। 'अच्छे विचार सभी दिशाओं से प्राप्त हों।'

इस सूक्ति के अनुसार यह पुस्तक सभी के लिए अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगी।

श्री बाबुभाई के प्रयत्न बहुत निष्ठा और सद्भाव से प्रेरित हैं। उनका ध्येय सफल हो ऐसी अभिलाषा।

दि. २७-३-२००७
रामनवमी

- डॉ. कान्तिभाई नावडिया
१४, कीर्तिमंदिर सोसायटी
पालडी, अहमदाबाद

निवेदन

गुजरात के महान संत पू. श्रीमोटा के विशाल और गहन अक्षरदेह का भक्तिभाव से अभ्यास करते हुए श्री बाबुभाई रामीने 'दुर्लभ देह मनुष्यनो' विषय पर पू. श्रीमोटा लिखित नोंध तैयार की, जो कि निजी अध्ययन के लिए ही थी। ईस नोंध को संपूर्ण करने का संपादन कार्य सद्गत श्री कान्तीभाई नावडिया ने किया। यह संग्रह का निमित्त योग से गुजराती पुस्तक के रूप में प्रकाशित हुआ।

इस पुस्तक के प्रकाशन एवं हिन्दी संस्करण में जिन जिन सद्गृहस्थों का योगदान मिला है इन सभी के हम आभारी हैं। प्रथम संपूर्ण रूप से यह पुस्तक पू. श्रीमोटा के शब्दो में ही प्रकाशन हुआ है। तब से आजपर्यंत समाज की मांग को नजर में रखते हुए कुल ८००० प्रतियों का प्रकाशन हो चुका है। अब यह पुस्तक हरिः ॐ आश्रम, सुरत की ओर से प्रथम संस्करण के रूप में प्रकाशित हो रहा है।

पू. श्रीमोटा अध्यात्मिक विज्ञान के उत्कृष्ट वैज्ञानिक हैं। मनुष्य जीवन के देह एवं मन की विचारधारा में कैसे कैसे बदलाव आते रहते हैं एवं इन विचारों के संस्कार के परिणाम स्वरूप दूसरा जन्म कैसी स्थिति में होता है, ऐसी दुविधा टालने के लिए इस जन्म में ही जागृतिपूर्ण जीवन कैसे जीना चाहिए यह संदेश पू. श्रीमोटाने अपनी सरल एवं स्पष्ट वाणी में बताया है। मानवमात्र इसी जन्म में जागृत

होते हुए अपना अगला जन्म निर्माण कर सकता है यह विज्ञान की विस्तृत समझ पू. श्रीमोटाने अपने साहित्य में समाज को प्रदान की है ।

यह प्रकाश कार्य में उदार हृदय से मददकर्ता सज्जन पुरुष श्री बाबुभाई रामी, सद्‌गत श्री कांतिभाई नावडिया एवं सु.श्री पारिजा हरि शेरदलाल के हम अत्यंत आभारी हैं । श्री भगवान के कार्य में हम निमित्त मात्र हैं, पू. श्रीमोटाने उनके कार्य में हमें यंत्र बनाकर हमारी ऊपर बड़ी कृपा की है, इस जागृति के साथ, पू. श्रीमोटा को वंदन करते हुए उनका शब्द समाज के चरणकमल में प्रस्तुत कर रहे हैं ।

दिनांक : १४-१-२०१३ लि.

मकरसंक्रान्ति ट्रस्टीगण

स्थल : सुरत हरिः ॐ आश्रम, सुरत

समर्पणांजलि

पू. श्रीमोटा के भक्त और उनकी समाज को जागृत-चेतनाशील बनाने की प्रवृत्ति के उत्साही कार्यकर्ता, अपनी आयु का ख्याल न रखते हुए भी नवयुवान जैसे उत्साही, उमंगी और शरीर की तंदुरस्ती के अधिकारी, स्वजनगण में परिचित और लोकप्रिय, सज्जन सेवक श्री यशवंतराय अंबाराम पटेल - बापू को 'दुर्लभ देह मनुष्य का' पुस्तक यह प्रकाशन बड़े मान, आदर और सन्मान से समर्पित करते हुए हम आनंद और आभार की अनुभूति व्यक्त करते हैं ।

दिनांक : १४-१-२०१३ लि.

मकरसंक्रान्ति ट्रस्टीगण

स्थल : सुरत हरिः ॐ आश्रम, सुरत

अनुक्रमणिका

पूज्य श्रीमोटा की जनकल्याण की प्रवृत्तियाँ	१
विनयवाणी	२
मानवदेह का उद्देश्य और उसकी रचना	३
मानवजीवन की वास्तविकताएँ	४
मनुष्यज्जीवन का महत्त्व	५
सूक्ष्म शरीर की रचना	६
स्थूल और सूक्ष्म शरीर की रच्चना में अंतर	६
स्थूल शरीर संरचना का आधार सूक्ष्म शरीर	७
मानवदेह का मूल आधार ही चेतन है	८
मानवदेह में पुरुष और प्रकृति-दो मुख्य तत्त्व विद्यमान है	९
पाँच तत्त्वोंवाला शरीर (मनुष्य) ही चेतना का अनुभव करने में समर्थ है	१०
मानवशरीर चेतन का व्यक्त रूप	११
मनुष्यशरीर के दुर्लभपन का हमें ज्ञान नहीं है	११
मानवशरीर को दुर्लभ क्यों माना गया है ?	१२
मनुष्य शरीर संरचना की विशेषता	१३
आयुर्वेद की खोज क्यों हुई ?	१४
मनुष्य जीवन किसके लिए ?	१४
भावना जागृति हेतु भावपूर्वक प्रभुस्मरण	१५
भावना प्रगट हो तब	१६
सूक्ष्म शरीर के नामस्मरण से अनुकूलतावाला शरीर प्राप्त होता है	१६

जीवन अनंत, मृत्यु अकस्मात	१७
शरीर की समग्रता, अटूटता बनी रहती है	१७
शरीर की आवश्यकता	१८
जन्मदिन का महत्त्व	१८
जन्मदिन मनाने का रहस्य	१९
मनुष्य शरीर की रचना हर सात वर्ष में बदलती रहती है	२०
मनुष्य जीवन में 'ताला' खुलने का प्रसंग यानी क्या ?	२०
'ताला' खुलने पर तो अनंतता का मार्ग है	२१
मनुष्य जीवनरूपी रत्न	२२
मनुष्य को मनुष्य की तरह जीना चाहिए	२३
मनुष्य देह परमात्मा की प्राप्ति के लिए एकमात्र साधन	२४
मनुष्य शरीर द्वारा ही कर्म का उद्देश्य फलित होता है	२५
'मनुष्य जीवन महादुर्लभ है' ऐसा बोलते तो हैं किन्तु...	२७
मानव द्वारा की गई भगवान की उपेक्षा	२७
हम भगवान को जेब में भी नहीं रखते	२९
मनुष्य जीवन में अनेक प्रकार के ऋण	२९
मनुष्य जन्म, अनेक प्रकार के ऋण अदा करने के लिए	३०
जो कुछ भी प्राप्त हुआ है वह सभी उपयोग के लिए नहीं है	३१
जीवन में जो कुछ प्राप्त हुआ, वह सब अपने बाप का नहीं है	३१
हम मनुष्य जीवन नष्ट कर रहे है	३२
हम 'जीव' बन गये हैं	३३

मनुष्य जीवन में दैवत्व और चेतनत्व जगाने की संभावना है ३३
मनुष्यत्व भावना से सुंदर है ३४
मनुष्य जीवन का उपयोग कब समझ में आएगा ? ३५
भावना-सत्संग-नामस्मरण : चेतना का मार्ग है ३६
मनुष्य जीवन में रागद्वेष शिथिल हुए..... ३७
मानवता का उत्कर्ष रागद्वेष मिटने से ३८
स्मरण और प्रार्थना से रागद्वेष कम होंगे ३८
नामस्मरण ही मनुष्य शरीर की सारी पहेलियाँ हल करेगा ३९
सुख-दुःख शांति-अशांति का रहस्य क्या ? ४०
मनुष्य-बुद्धि का रहस्य ४१
बुद्धि चेतन का रहस्य पाने के लिए है ४१
मनुष्य को शांति क्यों नहीं मिलती ? ४२
मनुष्य जन्म में शांति के लिए सरल उपाय ४२
मनुष्य के स्वभाव का रूपान्तर कब होगा ? ४३
मनुष्य योनि में विकास-संघर्ष का उद्देश्य ४३
मनुष्य का 'तप' कौन-सा ? ४४
भगवान साथ होंगे यदि... ४५
जो कुछ करना है वह हमें स्वयं ही करना है ४५
मानवशरीर में पुरुष को प्रगट करने का तरीका ४६
मनुष्य जीवन में सत्त्व का कवच टूटना कठिन है ४७
चेतना में निष्ठा प्राप्त सद्गुरु के साथ तादात्म्य स्थापित करो ४८
'चेतनानिष्ठ' के साथ हृदय की जंजीर बाँधो ४९

मनुष्यजीवन और प्रारब्ध	४९
मनुष्य जीवन का अवतरण	५०
जीवन जीते हुए गूढ़ प्रसंग कब समझ में आएँगे?	५१
ब्रह्मांड और मनुष्य शरीर	५२
हमारे साइकिक हार्ट का कार्य	५४
सबकोन्शियस माइन्ड (उपचेतन मन)	५५
मृत्यु पश्चात् जीवात्मा की स्थिति	५७
तेरह दिन के पश्चात् जीव की गति-स्थिति	५८
संत-समागम से लाभ	६०
जीव की गति और कार्य	६६
शार्दूलविक्रीडित	७३
मृतात्मा के कल्याण के लिए प्रार्थना	७३
शिखरिणी-मंदाक्रांता	७४
पूज्य श्रीमोटा को मिले संत पुरुष	७५
आरती	७८
आरती का भावार्थ	७९

पूज्य श्रीमोटा की जनकल्याण की प्रवृत्तियाँ

- मौन मंदिरों की स्थापना।
- गाँव-गाँव प्राथमिक शालाओं के कमरों के निर्माण के लिए दान।
- विज्ञान, खेती, मेडीसिन, सर्जरी, इलेक्ट्रोनिक्स, प्लेनेटरी एण्ड स्पेस सायन्सिज, सस्ते-मजबूत मकानों का निर्माण कार्य, सौर ऊर्जा, प्रदूषण, खनिजविद्या, प्राकृतिक विज्ञान, कृषि, पशुसंवर्धन आदि के संशोधन के लिए अखिल हिन्द स्तर पर अनेक पारितोषिक।
- गुजरात स्तर पर हरीसूखी खेती, बगीचे में होनेवाली खेती, रेशम, समुद्रशास्त्र, पुरातत्त्वविद्या, बायोजीओ, सोईल केमिस्ट्री, बोटनी प्लान्ट्स, प्लान्ट पेपोलोजी, ट्रोपिकल डीसीसिज, इंजीनियरिंग, टेकनीकल विषय, रंग, रंग की बनावटें, प्राणी/विज्ञानशास्त्र, आदि के लिए भिन्न-भिन्न महाविद्यालयों द्वारा स्पर्धात्मक पारितोषिकों की योजनाएँ।
- नदी, समुद्र में तैरने की स्पर्धाएँ, स्नानागार, मेरेथोन दौड़, नाव चलाने की स्पर्धा, दौड़ स्पर्धा, पर्यटन, पदयात्रा, पर्वतारोहण, खेलकूद आदि के लिए दान जिससे साहस, हिंमत, नीडरता जैसे गुण पैदा हों।
- समाज में गुण और भावना आवे ऐसा मौलिक सर्जन जिसके द्वारा ज्ञानगंगोत्री संदर्भ ग्रंथों का सर्जन, बालभारती, किशोरभारती, विज्ञान श्रेणी के ग्रंथ, सर्वधर्म तत्त्वज्ञान दर्शन श्रेणी के ग्रंथ, गिजुभाई बालजीवन विकास योजना।
- श्री अरविन्द तत्त्वज्ञान व्याख्यानमाला, श्री गोवर्धनराम व्याख्यानमाला, श्री मेघाणी स्मारक ग्रंथमाला, श्री नर्मद स्मारक ग्रंथमाला आदि।
- वेद की ऋचाओं के अर्थ आमजनता को सुलभ बनें, इसके लिए प्रकाशन।
- ब्रिटिश एन्साइक्लोपीडिया जैसे कोश की ग्रंथ श्रेणिओं तथा गुजराती साहित्य कोश के लिए दान।
- रामायण, महाभारत, भागवत आदि ग्रंथों की त्रिरंगी सचित्र सरल शैली में कथाओं का प्रकाशन।
- समाजोपयोगी कार्यों के लिए, जीव को संकट में डालकर किये गए साहस, बहादुरी भरे कार्य, मानवतालक्षी कार्य, व्यायाम वीर तथा मानवता की महक को फैलाने जैसे कार्यों के लिए दान की धारा को प्रवाहशील रखना।
- इसके अलावा फलवाले-वृक्षों का रोपण, पानी के प्याऊ, पक्षी को दाना, स्नानघाट की दुरस्ती, स्त्रिओं की व्यायामशाला, अस्पृश्यता निवारण, संगीत, वाद्यनृत्य, चित्र जैसी ललितकलाओं के प्रोत्साहन के लिए भी दान की गंगा प्रवाहमय बनाए रखना।

विनयवाणी

प्रभुजी शरण चरण में राखो जी, पाय लागूं ।
रसियाजी अन्तर्यामी ! मेरे हृदय कमल के स्वामी
अलबेला प्रेमी नामी रे, पाय लागूं ।
शरणागत वत्सल जानुं, मेरी अन्तर्कथा सुनाऊं
पर मन में मैं घबराऊं रे, पाय लागूं ।
अपूर्णता मेरी मिटावो, अपने निकट लावो
चरणों में स्थान दिलावो रे, पाय लागूं ।
प्रियतम मैं साधन हीना, दिल प्रेमभरा तुझे दीन्हा
सिर तेरे चरणों में किन्हा रे, पाय लागूं ।
बालक में जोर तो कुछ ना, जो कुछ है केवल रोना
ऐसे जोर से मुझे तैरना रे, पाय लागूं ।

मानवदेह का उद्देश्य और उसकी रचना

मनुष्य शरीर का क्या उद्देश्य होना चाहिए, उसके ज्ञान के प्रति सभानता जाग्रत होनी चाहिए । देवयोनि उत्तम है तब भी मनुष्य-जन्म उत्तम-दोहन किया हुआ कहा जाता है। ऐसा क्यों कहा गया है ? **क्योंकि मनुष्यजन्म से ही ज्ञान उत्पन्न होता है ।** मनुष्य योनि में द्वन्द्व की रचना है । इसलिए आमनेसामने युग्म सुख-दुःख, लाभ-हानि, अनुकूल-प्रतिकूल, सत्-असत् आदि आमने-सामने के पक्ष हैं । **ऐसा ज्ञान मनुष्य योनि में ही हो सकता है, ऐसी समझ आनी चाहिए ।** सीधी स्थिति में कभी भी समझ आ सकती है ? देवयोनि में इतना सुख भोग होता है कि वहाँ, समझ प्रगट नहीं होती है । जहाँ घर्षण होता है, वहाँ बुद्धि विचार करने लग जाती है। किसी मानव के साथ बहुत समताभरा व्यवहार किया हो और फिर किसी कारणवश घर्षण हो तो उसकी प्रकृति हमारे ऊपर तुरन्त ही तप्त हो जाती है । इसलिए द्वन्द्व की रचना समझ पैदा करने के लिए है । ऐसी रचना केवल मनुष्य योनि में ही है, चेतना की समझ प्रगट हो इसके लिए कर्म है । किन्तु वह निरासक्त, निरहंकारी, निर्ममत्वभाव से हो सके, तभी संभव है । यह तो कोई रामकृष्ण, नामदेव जैसे संत व्यक्ति ही इस तरह से कर्म कर पाये हैं ।

(मौनमंदिर का हरिद्वार, पृ. ४-५)

मनुष्य शरीर में पाँच तत्त्व (अग्नि, वायु, जल, पृथ्वी, आकाश) मिले हैं । हमारा शरीर गर्म रहता है। वह तेज तत्त्व अर्थात् अग्नि के अस्तित्व का प्रमाण है। यह प्रत्यक्ष सत्य है । शरीर में वायु, जल और पृथ्वी तत्त्व हैं इतना तो समझ में आता है । किन्तु आकाश तत्त्व है, यह समझ नहीं आता । पर यह तत्त्व है, यह हकीकत है । मानवदेह में चेतन तत्त्व है । यह शरीर, जीव या प्राण से भी गहरा तत्त्व है । फिर मानव शरीर में मन, बुद्धि, प्राण और अहम् भी हैं ।

(मौनमंदिर का हरिद्वार, पृ. ३९)

मानवजीवन की वास्तविकताएँ

पशु, पक्षी, जलचर आदि सभी को आनंद की प्रवृत्ति रुचती है । जबकि वे मनुष्य से अधिक विकसित नहीं हैं। मनुष्य योनि विकसित हुई योनि है । पशु-प्राणी में सुखदभाव विकसित होते रहते हैं, उन्हें प्रयत्न नहीं करना पड़ता । दूसरी तरफ उनमें शत्रुता की भावना भी है । मनुष्य को प्रकृति ने जो धर्म दिया है उसे संतोष देने के लिए प्रकृति है । हम लगातार ऐसा कुछ उपभोग नहीं करते हैं । पशु-पक्षी आदि में अपने आप में ही सहज रूप में संयम है । मनुष्य की बुद्धि का आंतरिक विकास हुआ है । मनुष्य में मन, बुद्धि. प्राण, चित्त, अहम् हैं। प्राणी में बुद्धि, मन खिले हुए नहीं हैं । प्राण है,

चित्त भी है । कामवृत्ति अमुक समय तक संयोग की भूमिका में प्रकट होती है । मनुष्य प्राणी ही ऐसा है कि जिसकी बुद्धि, चित्त, प्राण का विकास हुआ है । पर यह विकास किस काम का ? मनुष्य ने उनका नकारात्मक वृत्तिओं को पोषित करने में उपयोग किया है और उस में से आनंद लेता है, पर वह हमेशा टिका नहीं रहता है । जिस काम के पीछे लोलुपता, आशा आदि होती है उसे काम कहते हैं । जिसे काम होता है, उसे ही क्रोध आता है और बुद्धि का बिगड़ना है । जिस प्रकार दूध में जामन डालने पर ही दही बनती है, उसी प्रकार बिगड़ना अर्थात् सर्वनाश। अनुभवी लोगों ने देखा कि ऐसा न हो तभी बच सकते हैं। **काम, क्रोध, लोभ, मत्सर इनमें से एक भी दाखिल हुआ कि पूरा सारा झुण्ड आ जाएगा । इसके कारण अशांति, ताप, वेदना सब कुछ होता है ।** आनंद नहीं आता, चैन नहीं पड़ती।

(मौन एकांतनी केडीए, पृ. १०७-१०८)

मनुष्यजीवन का महत्त्व

हमें मनुष्य का जीवन प्राप्त हुआ है । **मानव में मन है इसलिए वह मानव है ।** मानव में पाँच इन्द्रियाँ विशेषरूप से खिली हुई होने से हम अपनी आत्मा के सत्त्व में खिल सकते हैं-आत्मा के प्रकाश में व्यक्त हो सकते हैं । स्थिर और स्थितप्रज्ञ हो सकते हैं, इसके लिए

हमारे पास पाँच करण हैं और इसीलिए मनुष्यजीवन सभी प्राणियों में श्रेष्ठ है ।

(मौनमंदिर का मर्म, ९५-९६)

सूक्ष्म शरीर की रचना

सूक्ष्म शरीर की रचना अलग प्रकार की होती है। आकाश और तेज, किसी में वायु का प्रमाण भी होता है। उच्च भावनावाले का सूक्ष्म शरीर आकाश तत्त्व का, इससे कम भावनावाले का सूक्ष्म शरीर आकाश और तेज तत्त्व का। इससे कमवाले में वायु होता है । फिर तो अनेक प्रकार के परमिटेशन-कोम्बिनेशन से सूक्ष्म शरीर बनता है । आकाश का अनुसंधान शब्द के साथ है । आकाश के प्रागट्य शब्द में और तेज का रूप में होता है । वायु का स्पर्श में । अब यदि शब्द का अभ्यास चलता रहे तो हमारा सूक्ष्म शरीर शीर्षस्थ रहकर हिस्सा लेता है । **यदि सूक्ष्म शरीर हम में काम करने लग जाय तो हम सद्भावना में प्रगट हो सकते हैं ।** स्थूल शरीर में यदि सूक्ष्म शरीर शीर्षस्थ भाग अदा करने लगे तो बहुत-सा काम हो जाएगा ।

(मौनमंदिर का हरिद्वार, पृ. १०४)

स्थूल और सूक्ष्म शरीर की रचना में अंतर

स्थूल शरीर तो द्वन्द्व और गुण द्वारा बना है। अनेक

प्रकार के द्वन्द्वों में वह कुटता जाता है - नीति-अनीति, प्रकाश-अंधकार, सुख-दुःख जैसे अनेक आमने-सामनेवाले जोड़ के बीच शरीर पिसता है । फिर मन, बुद्धि, चित्त, प्राण और अहम् शरीर के साथ एकरूप हुए होते हैं । **इसलिए जो आवेग उठें उनकी असर शरीर पर होती है** । जब कि सूक्ष्म शरीर तो तीन तत्त्व-आकाश, तेज, वायु का बना हुआ होता है । वायु तो अंतिम निचले कोटि के जीवों में शीर्षस्थ होता है । वायु को स्पर्श से अनुभव कर सकते हैं । तेज को देख सकते हैं । जबकि आकाश तो निराकार, व्यापक और गहन है ।

विस्तार विविधता :

आकाश-शब्द : सत्त्व
तेज-रूप-वायु-स्पर्श : रजस्
जल-पृथ्वी-स्थूल : तमस्

(मौनमंदिर का हरिद्वार, पृ. १०५)

स्थूल शरीर संरचना का आधार सूक्ष्म शरीर

पृथ्वी पर सूक्ष्म प्रकार का वातावरण है और सूक्ष्म में अनेक बातों का सर्जन होता है । स्थूल शरीर संरचना का आधार सूक्ष्म शरीर है । सूक्ष्म पहले प्रगट होने के कारण, सूक्ष्म के संस्कार इतने प्रबल होते हैं कि ऐसा शरीर धारण करने की संभावना खड़ी होती है । **मृत्यु**

के समय सात्त्विक प्रकार की भावना बनी रहे तो उसी प्रकार के जन्म लेने की संभावना होती है, पर वैसी भावना धारण करने की आदत हो तभी ऐसा बनता है?

सगे-संबंधी के साथ कर्म व्यवहार करता मन, बुद्धि, चित्त, प्राण में अनेक प्रकार के भावों के कारण सूझ नहीं आ पाती। यदि अभ्यास हो तो उस समय हमें वैसा सूझेगा किन्तु इसमें तो अभ्यास होने पर भी ऐसे भावनात्मक प्रकार का भाव में प्रगट होना दुष्कर है। ऋषि-मुनियों को भी मृत्यु के समय इदम-तृतीयम्-संसारी वृत्ति का भाव जागता है। पर, **यदि जीते-जागते नर के साथ संपर्क रखें और यदि भगवान की कृपा हो तो शरीर त्यागते समय भावना प्रगट होती है।** यदि ऐसा हो तो सूक्ष्म में ऐसी भावना प्रगट होती है और हमारे अनुकूल जन्म होता है। नहीं तो कर्म से नहीं छूट पाते।

(मौनमंदिर का हरिद्वार, पृ. १०४)

मानवदेह का मूल आधार ही चेतन है

हमारे शरीर की रचना यदि जाँचें तो उसकी सारी समझ ज्ञानतंतु द्वारा होती है। ज्ञानतंतु का मूल मस्तिष्क में है और मस्तिष्क हमेशा ऊपर होता है। उस मस्तिष्क में कितने ही केन्द्र हैं। उदाहरण स्वरूप श्रवण शक्ति, सूंघना, देखना अर्थात् आँख द्वारा जो देखते है, उस आँख की पुतली के साथ सारे ज्ञानतंतु

जुड़े हैं । उसकी गति के कारण उसका आकार स्पष्ट होता है, वैसे ही सुनने में कान के पर्दों के साथ तरंगे टकराने से वहाँ जो ज्ञानतंतु हैं, उनसे टकराते हैं । इसतरह सुनाई देता है । नाक के द्वारा सूंघते हैं वह भी ज्ञानतंतुओं का केन्द्र है। आँख तेज का, कान आकाश का और स्पर्श वायु का केन्द्र है । उसी प्रकार जल और पृथ्वी तत्त्व भी वहीं पर हैं । इसलिए इन सभी का आधार जिन केन्द्रों में है उनका मूल आधार चेतन है ।

(मौनमंदिर में प्रभु, पृ. ७८)

मानवदेह में पुरुष और प्रकृति-दो मुख्य तत्त्व विद्यमान हैं

चेतना का अनुभव करते हैं तब क्या होता है ? चेतना का धक्का लगने से हाथपैर सभी इन्द्रियाँ काम करती हैं । सभी मनुष्यों को इसका ज्ञान नहीं । यदि, किसी भाग्यशाली जीव को इसका ज्ञान होता है । इसकी ज्ञान चेतना जिसमें जागृत होती है तब चेतनतत्त्व में क्या होगा ? उसकी शक्ति कैसी होती है ? उसके गुणधर्म कैसे होते हैं ? उसका मनन चिंतन होता है । यह सारा ऋषि-मुनियों ने एक के बाद एक लेकर जाँचा और इस प्रकार सभी को जाँचते-जाँचते 'यह नहीं' 'नेति नेति' कह गये । 'यह

चेतन नहीं है' इस प्रकार खोजते-खोजते उन्हें ज्ञात हुआ कि हमारे शरीर में पुरुष और प्रकृति दो तत्त्व विद्यमान हैं । इसमें प्रकृति का राज्य चलता है और पुरुषतत्त्व सुषुप्त है । वह प्रकृति को पूरी स्वतंत्रता देता है । आत्मा में साक्षित्व का भी गुण है, उसी प्रकार पुरुष का भी है । पर पुरुष सुषुप्त अवस्था में होने से उसमें साक्षी का गुण होने पर भी वह तटस्थ है । इसलिए प्रकृति कैसा भी कर्म करे वह सभी प्रकृति का ही होता है ।

(मौनमंदिर में प्रभु, पृ. ७९)

पाँच तत्त्वोंवाला शरीर (मनुष्य) ही चेतना का अनुभव करने में समर्थ है

मनुष्य योनि में जो चेतन है उसे पूर्ण रूप से अनुभव करने की संभावना है और वह सब मात्र मनुष्य जीवन में ही संभव है । पशुयोनि, देवयोनि एवं पृथ्वी लोक के अलावा किसी में भी चेतन के अनुभव करने की संभावना नहीं है। **जहाँ यह पाँच तत्त्वोंवाला शरीर है वहाँ यह सारे चेतन का अनुभव होने की क्षमता है । देवयोनि भी भोगने की योनि है । पुण्य खत्म होने पर दुबारा मनुष्य योनि में जन्म लेना पड़ता है ।**

(मौनमंदिर का मर्म, पृ. २७)

मानवशरीर चेतन का व्यक्त रूप

समाज में बहुत से लोग बोलते हैं कि मनुष्य जीवन दुष्कर है, इतनी समझ लोगों को है । **पर मनुष्य शरीर का वह जीवन क्यों दुष्कर गिना जाता है, वह बहुत कम लोग जानते हैं** । हम चेतन को भगवान, परब्रह्म, पुरुषोत्तम इन सारे नामों द्वारा पुकारते हैं । उसीका ही व्यक्त स्वरूप यह मानवशरीर है । इतना होने पर भी इस चेतन का पूरा-पूरा कोई रूप नहीं है । इसलिए इस चेतन को अनुभव करने के लिए यह मनुष्य जीवन प्राप्त हुआ है । पर हमें इस बात का ज्ञान नहीं है । हम चेतनमय होने पर भी द्वन्द्व और गुण में प्रगट होने से चेतन का ज्ञान नहीं रहता। इस चेतन की अनुभूति के लिए ही यह मानवदेह मिला है । इसके अलावा चेतन का अनुभव नहीं होता।

(मौनमंदिर का मर्म, पृ. २४)

मनुष्यशरीर के दुर्लभपन का हमें ज्ञान नहीं है

जैसे हम धन कमाते हैं वैसे भगवान के नाम का धन कमाने का अनुभव और उसके मूल्यांकन की हमें समझ नहीं है । इसलिए अनेक अनुभवियों ने कहा, 'भाई, यह दुर्लभ अवतार है ।' पर बुद्धि का

अभिमान बहुत बड़ा है और अहम् भी अधिक है । मनुष्यशरीर का यह अवतार बहुत दुर्लभ है इसका हमें ज्ञान नहीं है । मुझे भी इसका ज्ञान नहीं था पर भगवान की कृपा से वह प्रगट हुआ ।

(मौन मंदिर में प्राण प्रतिष्ठा, पृ. ६२)

मानवशरीर को दुर्लभ क्यों माना गया है ?

शरीर को मैं तो अत्यधिक महत्त्व देता हूँ । चेतन की अनुभूति के लिए शरीर महत्त्वपूर्ण है । मानवशरीर के बिना उसका अनुभव संभव नहीं और जिस आदर्श की ऊँचाई पर पहुँचना है उस शिखर पर शरीर के बिना, शरीर के आधार बिना चढ़ना संभव नहीं है । मनुष्य के रूप में ऐसे अनेक शरीर-असंख्य शरीर-नश्वर देह खोने के बाद ही प्रभु से-प्रभु की कृपा से विरल व्यक्ति ही मानव जन्मवाले शरीरधारी जीव से उसे-प्रभु को खोजने के काम में आ पाता है । उसमें भी ऐसी खोज करनेवालों में भाग्य से ही किसी को ही सच्ची प्रबल तमन्ना जागी होती है । **ऐसी तमन्नावालों में कोई ही उसे अनुभव कर सकता है । इसलिए ऐसा मानवशरीर दुर्लभ माना गया है । इसके लिए उसका जतन करना आवश्यक है ।** इससे शरीर टिकता है और न टिके तो भी उस प्यारे के कृपाबल को आमंत्रित करने के लिए सदा यह जीव तो उद्यत रहता ही है ।

(कैन्सर सामे. पृ. ८)

मनुष्य शरीर संरचना की विशेषता

चेतन का अनुभव करने की पात्रता तो मनुष्य शरीर में है, शरीर बार-बार नहीं मिलता ऐसा नहीं है । ऐसे तो अनेक जन्म बिताने पड़ते हैं । इस शरीर में पाँच तत्त्व, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ और अंदर पाँच करण हैं । मन, बुद्धि, चित्त, प्राण और अहम् को अंतःकरण कहा जाता है, मनुष्य शरीर की सचमुच यही संरचना है और शरीर की विशेषता है । मनुष्य व्यवहार की प्रवृत्ति या कामकाज आदि करता है । वह उसमें विद्यमान मन-बुद्धि को आभारी है । मनुष्य को यदि काम, क्रोध, लोभ, मोह, आशा, तृष्णा न हो तो वह प्रवृत्ति नहीं कर सकता । वह प्राण से संचालित है । इसलिए वह कर्म किया करता है । आशा, तृष्णा आदि हुए कर्म से प्राण की शुद्धि हुआ करती है । यदि काम, क्रोध, लोभ, मोह में अतिशयता न हो तो प्राण ऊर्ध्वरितस (होने) लगता है । प्राण ऊर्ध्वरितस हो तो सद्भाव और सद्कार्य की वृत्ति जन्मती है । **यदि मनुष्य में एक दूसरे का भला करने की और प्रभुप्रीत्यर्थ 'दूसरों का भला करूँ' ऐसी भावना न हो तो पतन होता है । जिसमें अहम्, नापसंदगी, अभिमान आदि कम न हुए हों, तो वह दूसरों की सेवा करने योग्य नहीं है ।** यहाँ जो आता है वह दूसरों के विषय में बात करता है । पर पहले तुम शुद्ध हो जाओ न ! **अपने राग-द्वेष को कम करो,** समग्र संसार में जिस-जिस

के साथ संबंध स्थापित हो, उन सभी के साथ प्रेम, त्याग, उदारता और सहानुभूति बढ़ाते चलें ।

(मौनमंदिर का हरिद्वार, पृ. ७९-८०)

आयुर्वेद की खोज क्यों हुई ?

हरेक कर्म भगवान प्रीत्यर्थ करना है, ऐसी भावना रहने पर ही शुद्धि हुआ करती है । शुद्धि हेतु अनेक प्रकार और मार्ग हैं । **ऋषि-मुनि शुद्धि के लिए साधना करते थे । किन्तु शरीर की भी बहुत-सी बाधाएँ हैं ।** बुखार, शर्दी, वायु, पित्त और कफ का प्रकोप होता है। यह सब न हो और **शरीर अच्छा रहा करे इस निमित्त आयुर्वेद विद्या को खोजा गया ।** वातावरण में असंख्य रोग के जीवाणु व्याप्त हैं। वे जीवाणु हमारे शरीर में प्रवेश किया करतें हैं । उन्हें बाहर कैसे फेंके उसकी विद्या वैद्यों ने खोजी है ।

(मौनमंदिर का हरिद्वार, पृ. ८१)

मनुष्य जीवन किसके लिए ?

मनुष्य जीवन किसके लिए है, उसे समझें । कड़वाहट को छोड़ें । दूसरों की निंदा करना छोड़ें । अवगुण देखने की दृष्टि छोड़ें । एक दूसरे के दु:ख में किस तरह मददरूप हों उसे देखें । एक दूसरे के जीवन में खुल्लापन आये उसे देखें और ऐसा करते-

करते भगवान का नाम लें तो भगवान की कृपा तो है ही। वह तो सदा-सर्वदा विकसित ही है । मनुष्य समाज में अनंत प्रकार की भावनाओं से प्रकाशित हो रही आत्माओं की सुवास जागृत हुई है । ऐसे लोगों के जीवन द्वारा भगवान की कृपा फैलती है इसका ज्ञान हमें नहीं हो पाता ।

(मौनमंदिर का मर्म. पृ. १९)

भावना जागृति हेतु भावपूर्वक प्रभुस्मरण

हम में प्रचंड भावना प्रगट नहीं हुई है । किन्तु चेतन का यह एक ऐसा प्रदेश है कि उसके सामने देखेंगे और उसे ढूंढ़ेंगे तो वह प्राप्त होगा ही । **भगवान का स्मरण यदि भावनापूर्वक हो तो ऐसा स्मरण चेतन को जाग्रत भी कर सकता है ।** केवल तोते की तरफ रटने से कोई अंतर नहीं पड़ता क्योंकि तोते और मनुष्य के जीवन में अंतर है । मनुष्य में चेतना होने से मनुष्य स्मरण करे तो वह यंत्रवत् नहीं बन सकता । मशीनरी में केवल जड़ता होती है जबकि मनुष्य जीवन में मात्र जड़ता नहीं होती। मनुष्य में तामस होता है । किन्तु जीवन में ऐसी जड़ता नहीं होती । मनुष्य में जितनी चेतन की शक्ति विकसित है उतनी दूसरे किसी में भी विकासित नहीं हुई है । **इसलिए शायद प्रारंभ में भावना**

न हो पर बारह-पन्द्रह घण्टे भगवान का स्मरण करें तब अवश्य प्रगट होगी ।

(मौनमंदिर का मर्म. पृ. ५०)

भावना प्रगट हो तब

भावना प्रगट हुई है उसके लक्षण हैं उससे स्फूर्ति आती है । भावना से अन्तर की सूझ उत्पन्न होती है। किसी भी प्रश्न के विषय में अधिक सोचना नहीं पड़ता है । जीवंन में उठनेवाली अनेक प्रकार की पहेलियों के उत्तर भी सरलता से मिल जाते हैं । उल्टे-सीधे तर्क नहीं उठते । भावना से हमें काम करने की कला भी प्राप्त होती है ।

(मौनमंदिर का मर्म. पृ. ५०)

सूक्ष्म शरीर के नामस्मरण से अनुकूलतावाला शरीर प्राप्त होता है

मनुष्य की मृत्यु के समय स्थूल शरीर की नस-नस अलग हो जाती है । मन, बुद्धि, चित्त, प्राण और अहम् । ये स्थूल के साथ जुड़े हुए हैं । स्थूल की चेतना उसके अस्तित्व के मिटने के अन्त पर होती है, तब सूक्ष्म करण अलग पड़ते हैं । उस समय सूक्ष्म शरीर शीर्षस्थ होता है । स्थूल शरीर की पकड़ नहीं रहती है । जो सूक्ष्म शरीर है वह भगवान का नाम लेता है । उस

नामस्मरण के संस्कार इतने अधिक प्रबल-बलवान होते हैं कि उसके कारण एक प्रकार की अनुकूलतावाला शरीर प्राप्त हो जाता है ।

(मौनमंदिर का हरिद्वार, पृ. १०२)

जीवन अनंत, मृत्यु अकस्मात

मैं तो जीवन को अनंत मानता हूँ और मृत्यु यह तो मात्र आकस्मिक है । मृत्यु के कारण जीवन की अखण्डता और अटूटता टूटती नहीं है । इससे तो शरीर का दुबारा जन्म होना संभव होता है । मृत्यु को वश किया है ऐसा तो यह जीव नहीं कहा जा सकता है क्योंकि तब तो मृत्यु होगी ही नहीं । शरीर धारण किया है इसलिए शरीर तो जानेवाला ही है, यह निश्चित सत्य है । परन्तु उसे लंबा खींचना संभव है । अनंतकाल तक शरीर टिके ऐसी संभावना नहीं है । इसलिए **साधना के क्षेत्र में शरीर का ममत्व और उलझन का टूटना यह एक अति कटु सच्चाई है और इस उलझन को तोड़ने के लिए ही सद्गुरु ने इस जीव को करांची में नंगा फिराया था ।**

(कैन्सर का प्रतिकार, पृ. २७)

शरीर की समग्रता, अटूटता बनी रहती है

यद्यपि आज या कल शरीर तो जानेवाला ही है,

यह सत्य है । तब भी उसके साथ-साथ शरीर की भी अटूटता और समग्रता लगातार कभी टूट नहीं जाती और इससे तो शरीर का दुबारा जन्म होना संभव होता है । इससे मुझे तो श्रीहरि की प्रार्थना में अनंत संभावनाएँ हैं, अनुभव होता हैं । इसलिए इसका सहारा यह जीव कभी नहीं छोड़ सकता ।

(कैन्सर का प्रतिकार, पृ. ८)

शरीर की आवश्यकता

शरीर को किसी भी प्रकार का कष्ट न हो, उसका ध्यान अधिक से अधिक रखें । 'तुम्हें हमें देवा ने दिया है' इसलिए कृपा करके शरीर का ध्यान पूरा रखें । **हमें शरीर को अमर नहीं रखना है किन्तु जिस उद्देश्य के लिए मिला है, उस उद्देश्य का ज्ञान जगाने के लिए शरीर की आवश्यकता है । इसलिए तुम्हें हरिस्मरण अत्यधिक करने की आवश्यकता है ।**

(कैन्सर का प्रतिकार, पृ. १५)

जन्मदिन का महत्त्व

मनुष्य के शरीर का महत्त्व अत्यधिक है । इसका महात्म्य और रहस्य समझ में आये इसके लिए ही जन्मदिन का महत्त्वपूर्ण स्थान है । इस प्राप्त शरीर से

ही वह, जो करना चाहता है कर पाता है । शुभ और अशुभ कर्म भी उसके द्वारा ही जीव कर सकता है । इस शरीर द्वारा ही जीव या तो अधिक बँधता है या तो अधिक मुक्त होता जाता है ।

शरीर है तब तक **जीव** की भोग क्रिया तो चलती ही रहती है, परंतु ऐसी क्रियाओं में जो **जीव** सबल, रचा-पचा और चेतायुक्त हुआ है । वैसा **जीव** तो उसमें किसी अनोखे रूप में ही चलता रहता है । **यदि जीव कुछ कर सकता है तो वह शरीर के कारण ही, इसलिए शरीर का महत्त्व दिल में पूर्ण रूप से जागृत और सचेतन हो तो जन्मदिन का भान होना वह योग्य गिना जाएगा,** परंतु इस प्रकार शरीर के जन्मदिन को हम सब ध्यान में नहीं रखते ।

(जीवन प्रेरणा, पृ. ८६-८७)

जन्मदिन मनाने का रहस्य

मनुष्य देह को बहुत दुर्लभ कहा है । चौदह प्रकार की योनिओं में चेतना का अनुभव होना बहुत मुश्किल है । **केवल एक मनुष्य शरीर से ही यह अनुभव प्राप्त होता है ।** यह दुर्लभ मनुष्य शरीर जो प्राप्त हुआ है इससे ही चेतना का अनुभव हो पाता है । इससे अर्थात् मनुष्य शरीर से ही यह संभव है । इसका इतना महत्त्व है । यह महत्त्व समझ में आये ऐसी हमारी बुद्धि समझयुक्त,

गतियुक्त, क्रियाशील, संवेदनशील हो इसलिए जन्मोत्सव मनाने की परिपाटी है ।

(मौनमंदिर में प्राण प्रतिष्ठा, प्र. पृ. ६१)

मनुष्य शरीर की रचना हर सात वर्ष में बदलती रहती है

शरीर का दूसरा महत्त्व (रहस्य) यह है कि हमारे शरीर की रचना हर सात वर्ष में बदलती रहती है। इसलिए सात वर्ष पूरे होते ही उसका एक साथ ही सारा बदल नहीं जाता किन्तु हर वर्ष और हर दिन उसके बदलने की क्रिया चलती रहती है। इससे शरीर के जन्मदिन से उसके अणु-परमाणु और कोष बदलते रहते हैं । इसका पता भी चल सकता है किन्तु उसका कोई जानकार हो उसे ही हो पाएगा। सर्जन डॉक्टर हो उसे जब नस्तर रखना हो तब शरीर में अमुक अवयव कहाँ है, इसकी उसे समझ है और उसके अनुसार ही वह नस्तर रखता है । इसलिए इसका जो जानकार होता है, उसे ही इसका पता चलता है, दूसरों को नहीं ।

(मौनमंदिर में प्राण प्रतिष्ठा, पृ. ६३)

मनुष्य जीवन में 'ताला' खुलने का प्रसंग यानी क्या ?

कितने ही लोगों के मन में तर्क दोष होता है कि

नये जीवन का अर्थ क्या है ? फिर इस दिन का तुक क्या है ? इसका रहस्य यह है कि दूसरे गाँव गये हों और हमारे घर ताला मारा गया हो तब तक घर में नहीं जाया जा सकता। उसमें भी चाबी खो गयी हो और एकदम मिल जाय और दरवाजा का ताला खुले तो कभी भी घर में दाखिल हो सकते हैं । उसी प्रकार **हमारे शरीर की सारी बाह्य इन्द्रियाँ हैं वैसे ही अंदर-मन, बुद्धि, चित्त, प्राण और अहम् पाँच करण हैं, उनमें अनेक प्रकार की उलझनें हैं । उनमें से संपूर्ण रूप से मुक्त हों तब इस साधना के प्रदेश में या भगवान के मार्ग में प्रवेश कर सकते हैं,** ताला खुलने का प्रसंग अर्थात् ऐसे जो महात्मा जिस चेतना की निष्ठा में प्रगट हों ऐसा जिस दिन ताला खुल जाय उसके बाद वे कहीं भी प्रवेश कर सकते हैं । **यही ताला खुलना ही उनका यह अवसर उनका नया अवतार है ।**

(मौनमंदिर में प्राण प्रतिष्ठा पृ. ६३)

'ताला' खुलने पर तो अनंतता का मार्ग है

आज जमाना इतना अधिक आगे है कि हरेक मनुष्य किसी कारणवश मन को बाँध देता है । इसमें अनेक प्रकार की बुद्धि की समझ उलझनें पैदा करती हैं । ऐसे जो अनेक प्रकार के संस्कार पड़े हुए हैं, वे बुद्धि में जब प्रज्ञा और मेधा के रूप में प्रगट हों तभी

समझ आती है । वह तो जब द्वंद्वातीत और गुणातीत हो तभी हो पाता है । यानी कि ताला खुले तभी हो पाता है । इसलिए ऐसे दिनों के जो अनुभव होते हैं वह उनके नये अवतार का जन्मदिन है । उसका महत्त्व शरीर के जन्मदिन से कहीं अधिक है और उस दिन के बाद अर्थात् ताला खुलने के पश्चात तो अनंतता का मार्ग है । **ज्ञान हुआ यानी परिपूर्णता को पा गए ऐसा नहीं है ।** मैंने तो भगवान की कृपा से पुरुषार्थ किया है। ऐसा करते-करते मेरे गुरु महाराज के आशीर्वाद से और मात्र मेरे प्रयत्न से, जो ताला खुलने का महाकीमती प्रसंग मुझे प्राप्त हुआ वह मेरे गुरु महाराज की कृपा से। इसका कभी अंत नहीं, **ज्ञान या विकास का अंत नहीं तो अनुभव का तो अंत ही कहाँ ?**

(मौनमंदिर में प्राण प्रतिष्ठा, पृ. ६४)

मनुष्य जीवनरूपी रत्न

शास्त्रकार और अनुभवी कह गये हैं कि मनुष्य शरीर द्वारा ही मुक्ति मिल सकती है । देवों के लिए भी मुक्ति दुर्लभ है । देवों को भी मुक्ति प्राप्त करने के लिए मनुष्य जीवन धारण करना पड़ता है । हमें मनुष्य जीवनरूपी बड़ा रत्न प्राप्त हुआ है। हम उसकी कीमत नहीं जानते । हमें उसका रहस्य प्राप्त नहीं हुआ है । **हम मनुष्य जीवन का अर्थ नहीं**

समझते हैं और पशु की तरह जीवन जी रहे हैं । पशु का जीवन हमारे जीवन से अच्छा है, क्योंकि उन्हें पाप-पुण्य का बंधन नहीं है । मनुष्य तो उससे भी बदतर प्राणी है । वह अनेक प्रकार के पाप करता है और पुण्य कम करता है । **हमें तो सुमेल बनाना है ।** एक दूसरे की मदद में लगना है किन्तु वह हम से होता नहीं है । इसके विपरीत हम निंदा, ईर्ष्या आदि पैदा होने देते है, पापाचरण करते हैं ।

(मौनमंदिर का मर्म, पृ. १५)

मनुष्य को मनुष्य की तरह जीना चाहिए

मनुष्य का केवल शरीर ही नहीं किन्तु मन, बुद्धि, प्राण, चित्त, अहम् ये सभी कीचड़ से लथपथ हुए हैं । प्राणी के शरीर को बंधन नहीं होता क्योंकि वह तो भोगयोनि कहलाती है। उनकी चार वृत्ति-आहार, निद्रा, भय और मैथुन से वे पाप नहीं करते क्योंकि वे प्रकृति के नियम को पालते हैं । जब कि मनुष्य तृष्णा, लोलुपता, अभिलाषा की वृत्तिओं में इतना अधिक उलझा हुआ है कि उसे दूसरे किसी का ज्ञान ही नहीं हो पाता है । जीवन में सद्भाव और सद्गुण बढ़ाने चाहिए । जिससे जीवन दीप्तमान हो, शोभित हो, परन्तु ऐसा आचरण उसे पसंद नहीं । **अनुभवियों ने तो देखा कि मनुष्य पशु से भी खराब होता है ।** एक कर्म से भी अनेक

कर्म खड़ा करता है । एक जन्म लेकर अनेक जन्मों का पाथेय बाँधता जाता है । **मनुष्य को मनुष्य की तरह जीना चाहिए, उसका भी उसे ज्ञान नहीं है । एक दूसरे के अवगुण न देखें, देखें तो मन में न रखें, सुमेल से रहें, रागद्वेष न करें, कामना क्रोध, लोभ, मोह, मत्सर, तृष्णा, लोलुपता आदि कम करें ।** पर ऐसा तो कोई करता ही नहीं है । यह मानव शरीर प्राप्त हुआ है इसका भान जागृत हो इसके लिए आप सभी को कहना है ।

(मौनमंदिर का मर्म, १५)

मनुष्य देह परमात्मा की प्राप्ति के लिए एकमात्र साधन

हमारा मनुष्य देह ही परमात्मा ज्ञानप्राप्ति के लिए एकमात्र साधन है । मानवदेह बिना उसका ज्ञान प्राप्त करने की संभावना किसी भी योनि में नहीं है । वह भी जैसे समझा वैसे ही समझाया था। हमारे में चौदह लोक हैं कहा गया है और उन हरेक लोक में अलग-अलग प्रकार की ऐषणाएँ ही मात्र अधिकतर भोग्य हुआ करती हैं अथवा भोगते जाओ। वहाँ के जीवात्माओं की तीव्र सूक्ष्म लोलुपताएँ रहा करती हैं। वैसे-वैसे मनुष्य अलावा अन्य योनि शरीर में उस योनि का देह तक ही उस काल के दौरान जो कामना होती है, उस कामना

से घिरे वातावरण में और उसी प्रकार अधिक प्रमाण में जीती जागती कामना उसे रहा करती है और जैसे-जैसे ऊँचे या नीचे प्रकार की योनि वैसे-वैसे उसका उसी प्रकार की वैसी कामनाओं में ही उलझा रहता है और एकमात्र उस कामना में वह उलझ रहता है । **यह सब अकेले निचले स्तर की जीवात्माओं के लिए ही नहीं है किन्तु पुण्यशाली जीवात्माओं के लिए भी है। इसीलिए हमारे में कहा गया है कि पुण्य समाप्त हो तब मृत्यु लोक में वे वापिस लौटते हैं अर्थात् सर्व योनियों में से वापिस मानवदेह में ही आना पड़ता है** और उस स्थिति में ही ज्ञान के उदय होने का अवसर आता है । ऐसा हमारे शास्त्रकारों ने माना है । 'मनुष्य का देह महँगा है, दुर्लभ है' ऐसी लोकोक्ति इससे संस्कार में जन्मजात होगी ।

(जीवन संदेश, पृ. २१५)

मनुष्य शरीर द्वारा ही कर्म का उद्देश्य फलित होता है

मानव शरीर द्वारा जीवमुक्ति को प्राप्त कर सकता है । दूसरी किसी योनि के शरीर से ऐसा होने की संभावना नहीं लगती । इसीसे **इस मानवशरीर की महत्ता अनंत मानी है और ऐसा मानकर जो जीव भगवान का मंदिर समझकर प्रत्येक कर्म करते हुए प्रत्येक पल में उसका**

सदुपयोग ही किया करता है, वह जीव पार हो जाता है ।

शरीर रहता है तब तक उसे अच्छा कर्म और खराब कर्म भी प्राप्त होता ही रहेगा । दोनों प्रकार के कर्मों में जीव को अपनी भावना की समझ से उसे धारण करना है । न तो अच्छे को देखना है न बुरे को देखना है। किन्तु वे दोनों मात्र गुण की लीला हैं ऐसे कर्म जीवन में विकसित करने के लिए ही प्राप्त हुए हैं। अथवा मन को समता, शांति, तटस्थता, साक्षीभाव, धीरज, सहनशीलता, उदारता, विशालता लाने के लिए ही सभी कर्म मिले हैं, ऐसा उद्देश्य यदि जीव प्रत्येक में जीवित रख सके तो अच्छे या बुरे कोई भी कर्म उसे बंधनकर्ता नहीं होंगे। उस-उस कर्म में वह जीव अपने जीवन का उद्देश्य फलित करता जाता है और ऐसे प्रत्येक कर्म और जीव के जीवन को फलित करनेवाले हो जाते हैं । उसी प्रकार ही जीव स्वयं को प्राप्त अच्छे या बुरे कर्म में एकमात्र अपने जीवन का उद्देश्य ही फलित करने की एक तान में लगा रहता है । **वैसे जीव के कर्म का अच्छापन या बुरापन विघ्नरूप नहीं होता है । वह तो मात्र समझता है कि उसमें से ही अपने जीवन का उद्देश्य फलित करना है और ऐसा उद्देश्य शरीर बिना फलित नहीं होता । इससे शरीर का उद्देश्य भी अनंत गुना है और यह सच है ।**

(जीवन और कार्य, पृ. १०९-१९१)

'मनुष्य जीवन महादुर्लभ है' ऐसा बोलते तो हैं किन्तु...

हमें मनुष्य का जीवन मिला है । इस पृथ्वी में मनुष्य जीवन मिलना दूसरे जीवों के जीवन से दुष्कर है । यह तो महादुर्लभ है । ऐसा सभी बोलते हैं । साधु-संन्यासी से लेकर सारे संसारी जीव भी ऐसा ही बोलते हैं । हम भी वैसा ही बोलते हैं, पर उसका उपयोग नहीं करते । **इस प्रकार सभी कहते हैं भगवान का नाम ही सत्य है पर वह लेता है सही ?** मेरे गुरु महाराज ने तो मुझे डंडा दिया था । मेरा 'चले तो दो लगा भी डालूँ। **तुम्हारा संसार, पत्नी, बच्चे, व्यापार सच है पर तुम्हें भगवान का नाम सच नहीं लगता** । यहाँ आनेवाले भी बहाना बनाते हैं कि काम था । बहाना निकालना यह तो दंभ है । सच बात कहना मेरा धर्म है । इसलिए दंभ न रखें । तुम मेरे मित्र बन गये हो तो सच बात कह देना । यहाँ तो प्रेम का बंधन है ।

(मौ. ए. केडीए, पृ. ६९-७०)

मानव द्वारा की गई भगवान की उपेक्षा

यह संसार भगवान का रचा है तो आनंद होना चाहिए । क्योंकि जगत ब्रह्म का स्वरूप है । इसलिए

आनंद ही होना चाहिए । यह संसार सुख के लिए है, यदि सुख के लिए न होता तो मनुष्य जी नहीं सकता। जिसमें उसकी रुचि होती है उसमें उसका जीवन बीतता है । इसलिए जिसमें स्वार्थ या गरज जागे उसमें रुचि प्रगट होती है । **पर भगवान के लिए हम में रस या स्वार्थ नहीं जागा है,** ऐसा सिद्ध होता है, कोई पूछता है कि भगवान के लिए क्यों स्वार्थ जागना चाहिए ? हम कहते हैं कि उनके साथ हमारा संबंध नहीं है ।

कारण संसार का धर्म तो अशांति, दुःख, संघर्षण आदि हैं और इसमें वे जागेंगे ही । इससे मुक्त नहीं हो सकते और यह सब कुछ यदि हो तो यह होनेवाला ही है । किन्तु यदि यह सब कुछ होने पर भी हमारा मन शांत रह सके तो इसमें से वह बच सकता है । **किन्तु मनुष्य तो भेड़ों के प्रवाह की तरह संसार में बहा करता है, इससे वह ऊँची गति में जा ही नहीं पाता ।** वह संसार की गति में ही रहता है । इसमें कोई समझ या दिल की भावना या भाव उत्पन्न नहीं होता। सब कुछ रूढ़ि के अनुसार चला करता है । **पर यदि उसका दिल जाग जाय तो उसे समझ में आ जायेगा कि दूसरी भी कोई ऊँचे प्रकार की भूख हैं और यदि वह जागेगा तो उस ओर उसकी दृष्टि जाएगी, किन्तु वह भी दुर्लभ है ।**

(मौनमंदिर में प्राण प्रतिष्ठा, पृ. ६८-६९)

हम भगवान को जेब में भी नहीं रखते

सभी कहते हैं कि भगवान है, पर कोई उसे जेब में भी नहीं रखता । अरे ! किसी को ऐसा सूझता भी नहीं । **भगवान नहीं है इसी तरह मनुष्य व्यवहार करता है, भगवान है ही नहीं इस तरह व्यवहार करता है ।** कोई सेवा करे, भजन करे, माला फेरे तब भी, ऐसा मनुष्य भी भगवान है ही नहीं ऐसा ही उसका भी व्यवहार होता है ।

(मौनमंदिर में प्राण प्रतिष्ठा, पृ. ६९)

मनुष्य जीवन में अनेक प्रकार के ऋण

एक बार गुरु महाराज ने कहा, 'अरे चुनिया, तुम्हारे ऊपर ऋण है ।'

'मैं गरीब सही, पर मुझ पर खास ऋण नहीं और वेतन भी मेरा कम मात्रा में है तथा कहते हैं तुम्हारे सिर पर ऋण है।' मैंने तो खूब सोचा और मना कर दिया। तो कहें, 'दो दिन सोचकर कहना ।' खूब सोचा । किसी का ऋण रह गया हो वह भी सोचकर देखा, पर कुछ समझ में नहीं आया । मैंने कहा, 'किसी के पैसे बाकी नहीं है, अब आप कहें...।' फिर मुझसे कहा, 'तुम खाते हो कि नहीं ? तो खाना पकाने के लिए ईंधन कितना चाहिए ? अब तक तुमने कितने पेड़ जला डाले ? इसलिए

उतने पेड़ उगाओ।' और तब से मैंने अनेक पेड़ उगाये हैं। वह भी ऋण था और फलवाले पेड़ उगाये। इसलिए जितने आश्रम हैं वहाँ ऐसा किया। कितने सारे फल खाते हैं। इसलिए जो फल हम खाते हैं उन्हें दूसरों ने हमारे लिए उगाया है। इसलिए ऐसे अनेक प्रकार के ऋण सिर पर हैं।

(मौनमंदिर में प्राण प्रतिष्ठा, पृ. ७५)

मनुष्य जन्म, अनेक प्रकार के ऋण अदा करने के लिए

हमने मनुष्य जन्म लिया है क्योंकि हमारे ऊपर अनेक प्रकार के ऋण हैं। समाज का ऋण भी है। यहाँ आनेवाले (आश्रम में) भगवान का नाम लें इतना ही नहीं पर जीवन का उन्नयन मार्ग पर आगे बढ़ने का प्रयत्न करें। नित्य एक घण्टे तक अच्छा काम किये बिना न सोयें। नित्य भगवान का नाम लें और सद्पठन और सत्संग किया करें तथा जीव प्रकार की वृत्तियों को कम करने का प्रयास करें। **दो भाइयों के बीच सुमेल न हो तो मनुष्य जीवन का मूल्य क्या ?** हम क्या समझें ? हम जो कुछ भी बोलते हैं उसका रहस्य न पता चले तो यह प्रवृत्ति मिथ्या है।

(मौनमंदिर में हरिद्वार, पृ. ११६-११७)

जो कुछ भी प्राप्त हुआ है वह सभी उपयोग के लिए नहीं है

यदि कोई कहेगा, 'यह हम जो कुछ दे रहे हैं, उसका बदला मिलेगा ?' मैं कहता हूँ यह तो निश्चित है। **कर्म का परिणाम निश्चित है।** कभी भी इसे चुकाना पड़ेगा और अभी भी अनजाने में भी चुकाते हैं। फिर उसमें गुस्सा या नापसंद हो उससे अच्छा है प्रेम से करो। वैसे ही समाज का ऋण या कर्ज प्रेम से या उमंग के साथ चुकाएँ। समाज, वृक्ष तथा प्राणी के प्रति भी हमें ऐसा ही व्यवहार करना चाहिए।

हमें समझ लेना चाहिए कि सभी उपभोग के लिए नहीं, भोग-विलास के लिए नहीं है। आवश्यकता के अनुसार उपयुक्त है। संसार में जो प्राप्त हुआ है वह भगवान की महद् कृपा है। **इसलिए उसका उपयोग सोच-समझकर करना चाहिए।**

(मौनमंदिर में प्राण प्रतिष्ठा, पृ. ७६)

जीवन में जो कुछ प्राप्त हुआ, वह सब अपने बाप का नहीं है

मनुष्य के पास जो कुछ है वह सभी अपनी होशियारी से प्राप्त है ऐसा मानने में उसका केवल अहम् है। मनुष्य यह भूल जाता है कि सब कुछ भगवान

की मदद से मिला है । उसे सोचना चाहिए कि उस पर अनेक प्रकार के ऋण हैं, माता-पिता, समाज, पितृ ऋण, आदि । जीवनमें जो कुछ मिला है वह सब अपने बाप का नहीं है । भगवान का है । पितृऋण-उनके अधूरे रहे कार्यों को पूरा करके तथा देवताओं का ऋण शुद्ध भावना से आराधना करके पूरा कर सकते हैं ।

(मौनमंदिर में प्राण प्रतिष्ठा, पृ. ७१)

हम मनुष्य जीवन नष्ट कर रहे हैं

जीवन कैसे खो डालते हैं ? अनेक प्रकार के अनावश्यक विचार, रागद्वेष, आघात, प्रत्याघात आदि में मनुष्य जीवन नष्ट कर रहा है । एक अनमोल हीरे को हम बरबाद कर रहे हैं ऐसा यदि हमें ज्ञान हो जावे तो बहुत अच्छी तरह उसकी रक्षा करेंगे, किन्तु ऐसा सही ज्ञान नहीं हो पाया है ।

पाँच करण-मन, बुद्धि, चित्त, प्राण और अहम् में विकृति आ जाती है । भेद के कारण विकृति होती है और उत्तेजना के कारण यह सारे करण समता की स्थिति में नहीं रहते और इस स्थिति में रागद्वेष जैसे बढ़ता है वैसे उसमें विक्षेप बढ़ता है ।

मनुष्य का महत्त्व एवं श्रेष्ठता उसे सहजरूप से मिले हैं। जो किसी भी योनि में विकसित नहीं हुआ है । **मनुष्य को सुख अच्छा लगता है पर दुःख का**

उपाय नहीं करता और तत् संबंधी शक्ति या जिज्ञासा भी नहीं जागी है । वह इच्छा करता है सही, पर अपनी अनेक प्रकार की वृत्ति, उलझन, समझ में बंधा है । उससे छूट नहीं पाता ।

(मौनमंदिर का मर्म, पृ. ९८, १०१)

हम 'जीव' बन गये हैं

हम आत्मा हैं । चेतन हैं पर जीव हो गये हैं । हम आत्मा की स्थिति का ज्ञान भूल गये हैं । हम भेद में हैं । हम आत्मा का ज्ञान प्रतिपल नहीं रख पाते हैं।

(मौनमंदिर का मर्म, पृ. १०२)

मनुष्य जीवन में दैवत्व और चेतनत्व जगाने की संभावना है

यदि हमें लगे कि मनुष्यत्व मिला है तो अनेक प्रकार की कलाएँ प्रगट करनी हैं । **ऐसा ज्ञानभाव जाग जाय तो देवत्व और चेतनत्व प्रगट होने की संभावना है ।** हमें तादृश्य रूप में उत्कट ज्ञान नहीं जागा है । इससे आनंद की स्थिति में नहीं रह पाते । अतएव ऊँचे प्रकार के भावनात्मक आनंद में रहें तो ध्येय अवश्य प्राप्त कर सकते हैं । उसकी नजाकत दूसरे प्रकार की है । इसलिए सर्वप्रथम जीवन की मर्यादा समझकर छोटा-सा ध्येय निश्चित करें और

उस ध्येय के प्रति अंतर से वफादारीपूर्वक प्रेम भक्ति से मंथन करें तो उस ध्येय को हम प्राप्त कर सकते हैं । वैसा करते-करते आत्मविश्वास प्राप्त होता है और आत्मविश्वास आते ही आगे बढ़ सकते हैं। **यदि भावना रखने का हमें ज्ञान न हो तो जीवन मुर्दे की तरह बीत जाएगा । मनुष्यत्व खिलाना हो तो उसे भावना को महत्व देना होगा ।** उसे दूसरों के दोष कम सोचने और बिलकुल न सोचें तो उत्तम। दोष देखें ही नहीं, वह भी ठीक नहीं है । पर वैसा देखना बने तब भी भावना से जीना है ऐसा ख्याल रखें । जिसे भावना जागृत करनी है वही उस ख्याल में रमा रहेगा । जीवन का रहस्य अनुभव करना हो तो भी भावना से ही उसे अनुभव कर सकते हैं। यह सारा आधार भावना पर है । उसे बनाये रखने के लिए छोटे से छोटा लक्ष रखें तो वह बहुत बड़ी बात है ।

(मौनमंदिर का हरिद्वार, पृ. १२८)

मनुष्यत्व भावना से सुंदर है

मैं तो एक ही क्षेत्र में बीस वर्ष रहा हूँ । **भावना के बिना मानवता टिकती नहीं है ।** भावना पैदा हो तो दूसरे के साथ मिलने में प्रेम-आनंद बढ़ता है, हृदय में भाव उत्पन्न होता है । भावना, प्रत्यक्ष प्रमाण से अलग

बात नहीं है । भावना होने पर एकदूसरे के साथ उत्साह पैदा होता है । प्रत्यक्ष प्रमाण द्वारा अपने दिल का माप निकालते रहें प्रत्यक्ष लक्षण बिना की बात असत्य है । **मनुष्यत्व प्राप्त है उसे तरोताजा रखना हो तो भावना को जीवित रखना होगा तभी मनुष्य जीवन रूपी पुष्प ताजा रह सकता है ।**

(मौनमंदिर का हरिद्वार, पृ. १२९)

मनुष्य जीवन का उपयोग कब समझ में आएगा ?

हम तेजस्वी और प्रसन्नतायुक्त बने हों, किसी से भी दबें नहीं, तब साधना की सही शुरुआत होगी और जब गंगामैया के प्रवाह की तरह दिल में भावना जागृत हो तब हम जिसे प्राण की और बुद्धि की शुद्धि कहते हैं वह अपनेआप हो जाती है और तब मनुष्य जीवन का उपयोग क्या है वह समझ में आ जाएगा। ऐसे व्यक्ति का ध्येय भी नज़र के सामने ही रहे । प्राण यानी आशा, तृष्णा, काम, मोह और लोभ का संमिश्रण । उसकी शुद्धि हो तब बुद्धि की शुद्धि होने लगती है । बुद्धि की शुद्धि हो यानी समता का भाव आना है और समता का आना यानी भगवान के साथ जुड़ सकते हैं ।

(मौनमंदिर का हरिद्वार, पृ. ८६)

भावना-सत्संग-नामस्मरण : चेतना का मार्ग है

संसार के व्यवहार में दुःख तो अवश्य आनेवाले हैं । उसने ऐसा कहा, ऐसा किया, यह सब हम में जागे तब उसका उद्देश्य सोचें । परंतु हम सामने वाले जैसा व्यवहार करे वैसा व्यवहार न करें । हमें तो भावना सतेज रहे और होता रहे इसी तरह का व्यवहार करें । ऐसा व्यवहार करते-करते भावना भी ज्वालामुखी जैसी हो जाती है । उसके साथ भगवान का नाम और सत्संग चालू रखें । ऐसा होगा तभी हम चेतना के मार्ग पर जा सकते हैं, यह बात निश्चित है । **हम स्वयं भावनाशील व्यवहार करेंगे तो सामनेवाला व्यक्ति भी भावना के साथ व्यवहार करेगा ऐसा होनेवाला नहीं है । दूसरे व्यक्ति अपनी-अपनी भावना के अनुसार व्यवहार करेंगे ।** पर हमें तो गुण शक्ति से आचरण करना है । **इसलिए तुम जिस ढंग से भावना से व्यवहार करोगे उसी प्रकार दूसरे तुम्हारे साथ व्यवहार करेंगे यह आशा छोड़ दें ।** मैंने निश्चित किया है कि मुझे ऐसा ही आचरण करना है और ऐसा आचरण करेंगे. तो भावना को प्रकाशित कर सकेंगे और सतेज कर सकेंगे ।

(मौनमंदिर का हरिद्वार, पृ. १२५-१२६)

मनुष्य जीवन में रागद्वेष शिथिल हुए बिना केवल भगवान का नाम लिया करने से ही मोक्ष मिलेगा, यह बात ही गलत है

मनुष्य जीवन प्राप्त हुआ है यह बात ही बता देती है कि चेतन को अनुभव करने की संभावना है। पर इसके लिए हममें ज्वालामुखी जैसी ज्वलंत भावना जागृत नहीं हुई है । इच्छाका होना आवश्यक है । पर इसका विचार ही नहीं आता है । विचार आये तो भगवान की भक्ति किये बिना नहीं रहा जाता । भावना का सघन स्वरूप भक्ति है । **कोई मनुष्य भगवान का नाम लिया करे, बैठकर मात्र इसी कर्म को किया करे, तब भी रागद्वेष में ही रहता हो तो इस क्रिया को भी मैं तो दंभ ही कहता हूँ ।** लोग कहते हैं कि रोज करोड़ जाप करो तो मोक्ष मिल जाएगा, ऐसा कहनेवालों को मैं कहता हूँ कि यह बात गलत्त है । लोगों को भ्रम में न रखो। यदि रागद्वेष कम न हो, काम, क्रोध, लोभ, द्वेष, ईर्ष्या कम न कर सके तो सतत जाप से भी कुछ न होगा। इस प्रपंचकाल में से उभरने का साधन ज्ञानभक्तिपूर्वक भगवान का स्मरण करना है । इससे भावना जागृत होगी। रागद्वेष कम करें तो काल बाधा नहीं डाल सकता है।

(मौनमंदिर का मर्म, पृ. ३०)

मानवता का उत्कर्ष रागद्वेष मिटने से

सचमुच मनुष्य की सेवा या मानवता की सेवा करनी हो तो भेद कम करना ही होगा । रागद्वेष कम किये बिना यह संभव नहीं है । सात्त्विक में सात्त्विक कर्म होते हैं किन्तु प्रकृति और स्वभाव द्वारा हम भेद बुद्धि को जन्म देंगे ही । **यदि मानवता का उत्कर्ष करना हो तो भेद या रागद्वेष कम करने से ही होंगे ।**

(मौनमंदिर में प्राण प्रतिष्ठा, पृ. ६५)

स्मरण और प्रार्थना से रागद्वेष कम होंगे

स्मरण और प्रार्थना से रागद्वेष शिथिल होंगे किन्तु मानवसमाज इसकी समानता नहीं रखता । इसलिए अनुभवी पुरुषों के एक साधन दिया और कहा कि भगवान का स्मरण करो, प्रार्थना करो । इससे एक प्रकार की चेतना जागृत होती है । ऐसा मेरा स्वयं का अनुभव है । **भगवान का स्मरण करने से रागद्वेष कम होने लगते हैं ।** भगवान का स्मरण यह कल्पना का विषय नहीं है । ऐसे अनेक खुदा के बंदे हैं कि जो स्मरण से पार हो गये हैं ।

(मौनमंदिर में प्राण प्रतिष्ठा, पृ. ६५)

नामस्मरण ही मनुष्य शरीर की सारी पहेलियाँ हल करेगा

सत्त्वगुण हो तो दया, समता सद्‌भाव, तटस्थता आदि होने से वह अपने जीवन का विस्तार बढ़ाता है। वह कभी स्वार्थी नहीं होता । सत्त्वगुण का बंधन टूटना बहुत कठिन है । उस समय भगवान उनकी मदद करने आते हैं । सत्त्वगुण ऐसे यों तो उत्तम है । वह तटस्थता, समतावाला होता है । बुद्धि भी उसकी स्थिर, प्रशांत होती है । वह चिर शांतिवाला और प्रसन्नतावाला होता है। किन्तु यह अंतिम स्थिति नहीं है । यहाँ वह आनंद की परिसीमा का अनुभव करे । वह कभी चलित नहीं होता है । क्षुब्ध नहीं होता है । वह इस उत्तम स्थिति में रहता है और दूसरे अन्य प्रश्न नहीं उठते हैं । ऐसी उसकी स्थिति है । सत्त्वरूपी सत्य है । वह सोने के पात्र से ढंका हुआ है । इससे पर हुए बिना चेतना की दशा को प्राप्त नहीं कर सकते । तब मेरे तुम्हारे जैसों को क्या करना चाहिए ? **हम जैसे तीसरी या चौथी भूमिकावालों को क्या करना चाहिए ? तब उन्होंने कहा कि भगवान का स्मरण करो ।** ऐसा करने से इस प्रकार की भूमिका बनेगी । **सभी के साथ सद्‌भाव, सुमेल बनाये रखो । भजन, प्रार्थना,**

सद्वाचन रखें और इससे जिस भूमिका का निर्माण होगा । इससे सारे कवच टूट जाएँगे ।

(मौनमंदिर में प्रभु, पृ. ८२-८४)

सुख-दुःख शांति-अशांति का रहस्य क्या?

मनुष्य शरीर द्वारा चेतनत्व को खोजा जा सकता है । दूसरी किसी भी योनि के शरीर से ऐसा नहीं हो सकता । यह सत्य बुद्धि से समझ में आये ऐसा है । द्वंद्व और गुण का यह शरीर बना है । आमने-सामने के पहलुओं के बीच जीवन होता है । सुख-दुःख, तेज-अंधकार, शांति-अशांति इन पासों के बीच आमने-सामने संघर्षण होता है । इसलिए चेतन तत्त्व का हार्द पाने, ज्ञान प्राप्त करने के लिए मनुष्य शरीर में ऐसी रचना की है । कोई पूछता है, 'भगवान ने यह सब किसलिए किया ? यह सब न हो तो मनुष्य सुखी होता ।' मैं कहता हूँ कि सुखी न होता किन्तु जड़ होता । देवयोनि में आनंद है, यह बात सच है । किन्तु वहाँ विकास नहीं है, विकास के लिए अवकाश भी नहीं है । **मनुष्य योनि में ही आमनेसामने पांसे होने के कारण विकास की संभावना है ।**

(मौनमंदिर का हरिद्वार, पृ. ८१)

मनुष्य-बुद्धि का रहस्य

मनुष्य की प्रकृति में जो बुद्धि रखी गई है, इससे सभी समझ में आता है । बुद्धि न हो तो मनुष्य वृक्ष, जलचर और पशु जैसा स्थगित हो जाय, उसका विकास नहीं हो सकता । शेषशय्या में भगवान क्षीरसागर पर सोते हैं । साँप के अनेक मुँह हैं । अनंतमुख ज्ञान का प्रतीक है, वटवृक्ष भी ज्ञान का प्रतीक है । उसका विस्तार हुआ करता है- यही सत्य है । **ज्ञान प्राप्त करने के लिए संकुचित नहीं रहना चाहिए । बुद्धि ज्ञान पाने अनुभव करने के लिए है ।**

(मौनमंदिर का हरिद्वार, पृ. ८२)

बुद्धि चेतन का रहस्य पाने के लिए है

प्रकृति विषयक समझ मनुष्य बुद्धि से प्राप्त करता है । **हम चेतनतत्त्व का रहस्य खोजें, इसके लिए भगवान ने बुद्धि दी है । पर उसे खोजने के लिए हमारे अंदर सचमुच की तीव्र इच्छा जागती नहीं है ।** संसार व्यवहार में जिस ओर हमारा मुँह मुड़ गया हो तो उस ओर की सारी समझ आये वैसे भगवान की ओर मुँह मुड़ गया हो तो उस ओर समझ आये । जिस ओर मुँह किया हो उस ओर की समझ आये । उसी ओर का हल मिले ।

(मौनमंदिर का हरिद्वार, पृ. ८२)

मनुष्य को शांति क्यों नहीं मिलती ?

मनुष्य का जीवन बहुत सीमित है । **उसमें अनेक प्रकार की आशा, इच्छा, कामना, लोभ, मोह आदि की तरंगें हैं । इसलिए जीवन में मनुष्य को शांति मिलनी कठिन है ।** तब भी हम टिके रहते हैं, क्योंकि जीवन में रस हैं, आनंद भी हैं। उसका कारण हमारे में चेतना है। आनंद और रस, यह चेतना के लक्षण हैं । चेतन होने पर भी हम ऐसी भूलभुलैया में पड़े हैं कि हमें उसके अस्तित्व का ज्ञान होता ही नहीं हैं ।

(मौनमंदिर का मर्म, पृ. ४४-४५)

मनुष्य जन्म में शांति के लिए सरल उपाय

जागृत मन को शांत कर सकें इसके लिए भगवान का स्मरण, सद्वाचन, सद्वर्तन की कला, दूसरों के साथ व्यवहार करें तब संघर्ष न हो इसके लिए वफादारी, प्रामाणिकता और प्रेमभक्तिपूर्वक प्रयत्न करना चाहिए । **इसके साथ ही हमें अपना निरीक्षक होना पड़ेगा** । हमें अपने मनादिकरणों का निरीक्षण करते रहना होगा । ऐसा करने से हम उससे अलग हैं । इस प्रकार की शक्ति पैदा होगी । उसमें हम लिप्त

न हों, उसमें तद्रूप न हों, किन्तु उसके साक्षी बन सकते हैं ।

(मौनमंदिर का हरिद्वार, पृ. १४२)

मनुष्य के स्वभाव का रूपान्तर कब होगा?

हम अनंत प्रकार के और अनंत मनुष्यों के साथ सम्बन्धों से जुड़े हुए हैं, ऐसे संबंधों में मिठास आदि पैदा हो और उनके साथ मातृभाव से, सद्भाव से, सुमेल से, प्रेम से व्यवहार करेंगे तो हमें अपने लिए ही ऐसा करना है, ऐसा समझें । हमारी बुद्धि सूक्ष्म होगी । हमारी वाणी सरल बनेगी। उसकी असर हमारी प्रवृत्ति-स्वभाव पर पड़ेगी । जिसे ऐसा उत्पन्न करना है, उसे संसार में इस तरह व्यवहार करना चाहिए। ऐसा करेंगे तो स्वभाव में रूपान्तर होने की संभावना है ।

(मौनमंदिर का हरिद्वार, पृ. १२३)

मनुष्य योनि में विकास-संघर्ष का उद्देश्य

मनुष्य योनिमें जगत के प्राणिओं की किसी भी योनि से अधिक प्राप्त हुआ है । हम विकसित हैं । हमारे मन, बुद्धि, चित्त और अहम् विकसित हैं । अन्य योनि में अहम् हमारे जितना विकसित नहीं है। देवयोनि उत्तम है । उसमें द्विधा वृत्ति नहीं है, वहाँ एक प्रकार की वृत्ति होती है, सुख ही भोगा करते हैं, किन्तु जहाँ

एक की स्थिति में पड़े रहना हो वहाँ संघर्षण नहीं होगा, टकराहट होगी नहीं इसलिए विकास नहीं होगा। जबकि मनुष्य योनि में द्वंद्व है । उसे लेकर टकराहट होती है । इसलिए वह सोचता है। मनुष्य को कठिनाई पड़े तो वह उसका उपाय खोजने के लिए उसकी बुद्धि तत्पर होती है । किसी भाई के साथ तुम्हारा अच्छा बनता होगा तब तक तुम उसकी प्रकृति को नहीं पहचानोगे। किन्तु जब संघर्ष होगा तब तुम उसकी प्रकृति को अच्छी तरह पहचान सकते हो, यदि वह उदार दिलवाला होगा तो वह वैसा दिखेगा। यदि वह कपटी, प्रपंची होगा तो वैसा लगेगा । **इसलिए संघर्ष जागने पर ही समझ आएगी ।**

(मौनमंदिर का हरिद्वार, पृ. ५१)

मनुष्य का 'तप' कौन-सा ?

"हम सद्भाव सुमेल रखें किन्तु दूसरे अर्थात् सामनेवाले अन्याय ही किया करें तो क्या करें ?" 'तो तुम अपना कर्म करो। तुम सद्भाव न छोड़ो ।' तप तो करना ही पड़ेगा न ? तो यह तप है । किसी को हमने मदद की हो, कितनी भी मदद की हो तब भी वह उल्टी तरह व्यवहार करे, हमें परेशान करे तो हमने अपना कर्म प्रामाणिकता से किया है ऐसा मानकर संतोष करें । यदि ऐसा न हो तो वैसी हमारी भूमिका तैयार नहीं है यों

समझें । इसलिए इन सब में से मार्ग निकालने के लिए तप तो करना ही पड़ेगा । **हमें सद्भाव, सहनशीलता सुमेल तो लाना ही होगा । यदि उस विषय में उल्टासीधा विचारोगे तो तुम्हें भोगना ही पड़ेगा । इसके अलावा कोई चारा नहीं है ।**

(मौनमंदिर में प्रभु, पृ. ८४)

भगवान साथ होंगे यदि...

जीवन में एक दूसरे के साथ सद्भाव-सुमेल रखकर जिएँ। दूसरों के विषय में कम बातें हों ऐसा करें । **अपने घर में-कुटुम्ब में एक दूसरे के दोषों की बातें न करें । इतना करने की भी आदत डाले तो पर्याप्त है ।** मनुष्य जीवन दुर्लभ है । हम से हो सके तो रागद्वेष कम करें। **किसी के शायद अवगुण दिखाई दें तो भी हम बदनाम न करें ।** इतना करें तो मुझे लगता है कि बहुत किया है । इस तरह करोगे तो भगवान गरुड़ पर बैठकर तुम्हारे पास आएँगे, अन्यथा प्रभु मदद नहीं करेंगे ।

(मौनमंदिर का मर्म, पृ. २०)

जो कुछ करना है वह हमें स्वयं ही करना है

हमारे साथ के जीव सुधर जाँय ऐसी आशा

रखना व्यर्थ है, जो करना है वह हमें स्वयं करना है। शान्ति, प्रसन्नता पर ठेस न पहुँचे तो आनंद की मस्ती की लहरों में खेला करें । इतना करें तब भी काफी है। **सामर्थ्य तो प्रत्येक मनुष्य में होता ही है** । एक मनुष्य इस तरह व्यवहार करे तो उसकी असर दूसरे पर हुए बिना नहीं रहती है । व्यक्ति केवल इतना ही संभाले तो समाज की सेवा नहीं करनी पड़ेगी । **इस प्रकार के व्यक्तिओं का समूह सत्संग से दूसरों को प्रभावित करेगा । स्वयं केवल ऐसा करने से वह समाज की सेवा करता है ।**

(मौनमंदिर का हरिद्वार, पृ. १४०)

मानवशरीर में पुरुष को प्रगट करने का तरीका

जब सत्त्वगुण की प्रतिष्ठा होती है तब उसके करण, गुण, इन्द्रियों में अत्यधिक परिवर्तन होता है । इसलिए पुरुष सुषुप्त अवस्था में है । किन्तु उसमें चेतन के गुण हैं । किन्तु उसमें चेतन के गुण हैं । वे यदि जागृत हों और वे यदि शीर्षस्थ हो जाँय तो चेतन के गुणधर्म जागृत होंगे और उसका स्वरूप जागृत होगा । पर प्रकृति के गुणधर्म जाँचने पर वे चेतन के अंग नहीं हैं जबकि पुरुष में समता, तटस्थता, साक्षित्व है इसलिए वह चेतन का गुणधर्म रखता है । इसलिए वह यदि शीर्षस्थ आ जाय

तो चेतन का गुणधर्म प्रकट होगा ।

पुरुष किस तरह शीर्षस्थ होगा ? प्रकृति के दो मूलधर्म-द्वंद्व और गुण । द्वंद्व यानी सत्-असत्, राग-द्वेष, सुख-दुःख आदि और गुण यानी सत्त्व, तमस और रजस । इसलिए द्वंद्व और गुण की पकड़ कम हो और उससे अलग होकर पुरुषत्व खिल उठता है । जबकि वह खिला तो है ही-इसलिए कि वह शीर्षस्थ आ जायगा इसलिए द्वंद्व और गुण की भूमिका मंद पड़नी चाहिए ।

(मौनमंदिर में प्रभु, पृ. ७९-८०)

मनुष्य जीवन में सत्त्व का कवच टूटना कठिन है

सत्त्व, यह एक ऐसा गुण है कि इससे इस प्रकार की भूमिका उत्पन्न होती है कि उसे कूद सकते हैं । वह जब जाग्रत होता है तब पुरुषत्व अधिक जाग्रत होता है । तमस् और रजस् में निम्न कक्षा की भूमिका है । **तमस् अर्थात् प्रमाद, आलस्य आदि यानी उसमें तुक्के उठते हैं किन्तु आगे नहीं बढ़ा जा सकता** । उसमें जड़ता होती है, **फिर रजस् में दौड़धूप होती है, तमाशा अधिक होता है, वह गति ही कराया करता है, उससे परेशान हो जाते हैं** । इसलिए उसमें एकरूपता नहीं आ पाती किन्तु सत्त्वगुण में स्थिरता, समता और तटस्थता है । **रजस्-तमस् के जो**

बाह्यावरण हैं उनका टूटना सरल है, पर सत्त्व का कवच टूटना कठिन है ।

(मौनमंदिर में प्रभु, पृ. ८०)

चेतना में निष्ठा प्राप्त सद्‌गुरु के साथ तादात्म्य स्थापित करो

जो व्यक्ति आत्मनिष्ठ है उसके मन, बुद्धि, चित्त, प्राण, अहम् में भेद नहीं होता । **हम यदि उसके हृदय के साथ एकरूप होने का हृदय से प्रयत्न करें तो वह भी हमारे साथ तद्रूप ही होने से उनके हृदय की शान्ति, प्रसन्नता के सहज गुणों को हम भी अनुभव कर सकते हैं ।** पर हमें उसके साथ जुड़ने का संकल्प तथा प्रयत्न तो करना चाहिए । चेतन के अनेक गुणधर्म हैं । वे सारे एक साथ प्रवर्तित होते हैं । वे गुणधर्म आत्मा के अनुभवी ही अनुभव करते हैं । मन में जो होता है उसके साथ लिप्त न होकर उसका निरीक्षण करें और ऐसा करते-करते प्रार्थना करें, ऐसा प्रयत्न करते-करते हम एक मुकाम पर अवश्य पहुँचेंगे । आर्द्रताभरी, गद्‌गद्‌भाव से प्रार्थना करें तो मदद पास में ही खड़ी है। ऐसी स्थिति प्रयत्न करने पर होगी । आत्मनिरीक्षण, आत्मनिष्ठा, हृदय के साथ संधान और प्रार्थना-ये तीन साधनाओं को कर सकें तो शान्ति, प्रसन्नता बनाये रख सकते हैं और आगे की सीढ़ियाँ खुल जाएँगी ।

(मौनमंदिर का हरिद्वार, पृ. १४३)

'चेतनानिष्ठ' के साथ हृदय की जंजीर बाँधो

हम शुद्ध भक्ति तो कर ही नहीं सकते । इसलिए सम्बन्ध तो बांधो स्वार्थ के लिए तो ऐसा करो । भगवान की ऐसी शक्ति है कि वे अदृश्य नहीं हैं । **समस्त ब्रह्माण्ड में जो चेतना है वही चेतनाशक्ति चेतनानिष्ठ जीवात्मा में विद्यमान होती है ।** उसमें चेतनाशक्ति को स्वरूप रूपान्तरित होता है। उसके साथ जीवित सम्बन्ध रखें । उसके साथ मैत्री रखें और कठिनाई के समय उसकी ही प्रार्थना करें, स्वार्थ बिगड़ता हो तो उसे पुकारें, पर उन्हें इस तरह पुकारने से नहीं चलेगा । उसके साथ प्रेम भरे हृदय का ज्ञानपूर्वक का सम्बन्ध रखना होगा तो काम सिद्ध होगा । यह तो प्रयोग करके अनुभव कर सकते हैं । पर मनुष्य के दिल में यह प्रगट नहीं होता । इस प्रकार के सम्बन्ध तुम्हें बुद्धि सुझाएगी, मदद करेगी पर इसके लिए चौबीसों घण्टे तुम्हें हृदय से लगन की जंजीर उसके साथ जोड़नी चाहिए ।

(मौनमंदिर का हरिद्वार, पृ. १५०-१५१)

मनुष्यजीवन और प्रारब्ध

मनुष्यजीवन यह स्थूल नहीं है । पर उच्च प्रकार की अभिलाषा साकार करने का एक अनमोल साधन है । मन, बुद्धि, चित्त, प्राण और अहम् ये साधन हैं।

हमारे जीवन को इन पाँच साधनों के द्वारा आकार दिया जा सकता है । इसके सामने कितने ही प्रारब्ध की बातें करते हैं । मुझे पूछते हैं कि इस प्रकार का जीवन हमारे प्रारब्ध में न हो तो कैसे हो सकता है ? अरे, तुम क्या जानो कि तुम्हारा प्रारब्ध कैसा है ? संसार में अनेक मनुष्य जो सोचते हैं उसे पार लगाते हैं । तो फिर वे लोग कहते हैं कि उनके प्रारब्ध में होगा । ऐसी दलील करनेवालों को मैं कहता हूँ कि तुम्हें अपने पर विश्वास नहीं है । तुम में ऐसे गुण नहीं हैं ऐसा मानकर सारा प्रारब्ध पर छोड़ देते हो । इसलिए तुम्हें कहता हूँ कि जो कोई छोटी-सी अभिलाषा है उसे साकार किये बिना चैन से न बैठो । यदि तुम मेहनत करके अपनी वस्तु को आकार दे सकोगे और पूरी तरह पार उतारोगे तो तुम में श्रद्धा उत्पन्न होगी । यदि उत्पन्न होगी तो हम जीवन को समृद्ध बना सकते हैं ।

(मौनमंदिर का मर्म, पृ. २४)

मनुष्य जीवन का अवतरण

सूर्य में जीव हैं । उसमें जल और पृथ्वी नहीं है । यह तो अवतरण (डीजनरेट) होते-होते हम मनुष्य हुए हैं । अनेक लोग कहते हैं, 'यह उत्क्रांति-विकास हुआ और मानव हुए हैं । पर मेरी दृष्टि में इन सब में से आत्मा से अलग-अलग जगह होकर यह मनुष्य हुआ ।

यह अवतरण है ।

प्रश्न-अवतरण होने के बाद अब फिर ऐसी उत्क्रांति होगी ?

पुनः ऊपर ऊपर चढ़ना । **भगवान भी, चेतन भी अवतरण करते हैं । अवतरण करते हैं वे ऊर्ध्वीकरण होने के लिए ।** जीवन की जो यह रहस्यमय गूढ़तावाली घटनाएँ हैं उसके पीछे का जो उद्देश्य है वह हमें अनुभव द्वारा कभी प्रकाशित होगा । **इसके लिए गूढ़तावाला जीवन (मिस्टीजम लाइफ) इस अनुभव के लिए हमारा मानस, हमारा मन, बुद्धि, चित्त, प्राण और अहम् इन सब की भूमिका तैयार होनी चाहिए ।**

(अन्वय-समन्वय, पृ. ६८-६९)

जीवन जीते हुए गूढ़ प्रसंग कब समझ में आएँगे ?

हृदय का भाव अलग है, फिर मन का भी अलग है । मति, चित्त, प्राण का अलग । अहम् भी अलग है ! इन सब का जहाँ एक साथ सुमेल हो तब जीवन में ऐसे रहस्यमय, गूढ़तावाले प्रसंग आते हैं और ये क्यों हैं ? इनका उद्देश्य क्या है ? यह भी तभी समझ में आयेगा । इन सभी का एकसमान सुमेल जहाँ हो, जो भाव जागे उस भाव से इस बुद्धि का विकास होकर उसका विस्फोट होकर वह अलग कक्षा में बुद्धि खिलती

है । जैसे फूल संपूर्ण खिलता है, तब सुवास अपनेआप आती है । उसे कहीं निकालने नहीं जाना पड़ता । उसका यह गुणधर्म है । उसी तरह यह बुद्धि भी, जहाँ सभी करणों का एक समान सुमेल होता है। तब वह भाव जागता है । उस भाव के कारण स्वाभाविक रूप से प्रत्येक का असली जो आत्मा का गुणधर्म है, जो स्वभाव है वह एकांत में खिलता है और तब यह सभी-जीवन में घटनाएँ, गूढ़तावाली घटनाँ-हमें ठीक ढंग से अनुभव से समझ में आता है । उसके उद्देश्य की समझ आती है। वह समझ आने पर ही जीवन का गूढ़तत्त्व हमारी बुद्धि में प्रवेश करता है और उसकी समझ बढ़ती जाती है कि जीव में ऐसा कोई गूढ़तत्त्व है ।

(अन्वय-समन्वय, पृ. ६८-६९)

ब्रह्मांड और मनुष्य शरीर

अंत में तो ब्रह्मांड की सारी रचना और लीला निहारें तो भी हमें समझ आएगा कि यह गूढ़तत्त्व है । पर हमारी बुद्धि सोच नहीं सकती, पहुँच नहीं सकती। **सारे ब्रह्मांड के सभी अनेक तारे, ग्रह, सभी लय (रिधम) में चलते हैं । वे एक दूसरे से भिन्न होने पर भी एक दूसरे के साथे जुड़े रहकर चलते हैं ।** जैसी पृथ्वी है, वैसे सारे ग्रह हैं । वे सूर्यमाला के साथ जुड़े हुए हैं । सारी सूर्यमाला फिर दूसरे से जुड़ी है।

दूसरे तीसरे के साथ इस तरह एक दूसरे के साथ जुड़े हैं । ऐसा लगता है भिन्न-भिन्न, अलग-अलग भी वे एक दूसरे से श्रेष्ठ के साथ जुड़ें हैं । पृथ्वी, सोम, सूर्य, मंगल, बुध, गुरु, शुक्र, शनि ये सारे रवि के साथ सम्बद्ध हैं। प्रत्येक एक दूसरे से उच्च स्थितिवाले के साथ जुड़े हैं। इसीतरह हमारा मन, बुद्धि, चित्त, प्राण इसके कारण पाँच ज्ञानेन्द्रिय वे सारे अहम् के साथ जुड़े हैं और मन, बुद्धि, चित्त, प्राण और अहम् आदि हृदय के साथ यानी कि इस सूक्ष्म हृदय के साथ जुड़े हैं और यह सूक्ष्म हृदय चेतना का केन्द्र अथवा मूल है और इसमें भी हम में दो मत हैं । कितने ही कहते हैं कि ब्रह्मरंध्रसिर के मध्य भाग में है । कितने ही कहते हैं कि हमारी छाती पर दो स्तन भाग हैं उनके एकदम मध्य भाग में वह सूक्ष्म हृदय में है । वह सूक्ष्म हृदय, केन्द्र में सही रूप से यहाँ लगता है और यहाँ तो परब्रह्म का स्वरूप अथवा चेतन वह अनुभव की कक्षा में अनुभव में वहाँ ब्रह्मरंध्र है और अभी स्थूल रूप से सोचें तो यह सब कुछ ज्ञान तंतुओं का राजा-ज्ञानतंतुओं का गूढ़ केन्द्र वह सारा दिमाग में है । वहीं से ही सारी समझ आती है । ज्ञानतंतु द्वारा ही वह जैसे अभी स्थूल रूप में हम समझते हैं वह यहाँ सही रूप में सब दिमाग में ही है । उसी तरह यह केन्द्र है । उस चेतन को चेतन के अनुभव में जो आता है उसी का वहाँ अनुभव होता है ।

(अन्वय-समन्वय, पृ. ७०)

हमारे साइकिक हार्ट का कार्य

यह जो सूक्ष्म हृदय है वह, जिस तरह पटरी पर गाड़ी उसके निश्चित स्थान (डेस्टिनेशन) पर ले जाती है उसी तरह सूक्ष्म हृदय उसके अनुभव में, उससे प्रेरणा प्रेरित कर, उसमें गति होने पर उस स्थल पर ले जाने में हमें सतत मददरूप हुआ करता है । उसे में साइकिक हार्ट कहता हूँ ।

साइकिक हार्ट यह प्रकृति से स्वतंत्र है । प्रकृति से वह संचालित नहीं है । इसलिए तो साइकिक हार्ट में मिस्टिसिजम भी रहा है । प्रकृति के अंदर गूढ़ तत्त्व है पर इसे प्रकृति से प्रकृति में रहकर-हमें समझ नहीं आएगा। जैसे वडोदरा शहर का हमें समग्र व्यू लेना हो, देखना हो तो वडोदरा शहर से ऊपर आकाश में जाँय वहाँ से उसकी समग्रता अनुभव कर सकते हैं इसलिए इसकी समग्रता का अनुभव करना हो तो उसकी उस स्थिति में रहकर नहीं होगा । उस स्थिति से ऊर्ध्व में जाना चाहिए । तो उस स्थिति का अनुभव होगा अथवा उस स्थिति से भिन्न हो सकें। जहाँ हैं वहाँ से हमें खिसकना चाहिए। उद्देश्यपूर्वक उसमें से खिसकें बिना चारा नहीं है । सामान्य रूप से हम से बाहर कोई अलग ही दिव्यता (डिविनिटी) है ऐसा समझकर करें ऐसा नहीं है । पर हमारे अपने में ही रही होती है और उसे प्रार्थना द्वारा हम अपने मन, बुद्धि, चित्त,

प्राण और अहम् को अधिक खुल्ला छोड़ देने के लिए अधिक विस्तरित करने के लिए, अधिक योग्य मार्ग खुलें ऐसी दृष्टि प्राप्त हो इसके लिए यह प्रार्थना हम करते हैं । यह प्रार्थना आवश्यक है । वैसा करते-करते हम जीवन के अंदर जो मिस्टिसिजम (गूढ़तत्त्व) है, इसका हमें अनुभव होता जाता है । जीवन में गूढ़तत्त्व के प्रसंगों का अनुभव होता जाता है । उसके पश्चात् ही जीवन ऐसा, जो गूढ़ताभरा-रहस्यवाला उसकी जो संरचना है, वह संरचना हमें समझ आती जाती है। उसकी समझ आने के बाद मनुष्य बहुत ही मुक्त हृदय से घूमफिर सकता है । उसका महत्त्व भी न्यारा है । तब मिस्टिसिजम इन लाइफ (जीवन में गूढ़तत्त्व) के बाद जीवन का गूढ़तत्त्व आता है । पहले तो जीवन में गूढ़तत्त्व हमारे अनुभव से परखना चाहिए। उसके बाद जीवन के गूढ़तत्त्व आते हैं ।

(अन्वय-समन्वय, पृ. ६९)

सबकोन्शियस माइन्ड (उपचेतन मन)

हमारे अपने ही सबकोन्शियस माइन्ड से अमुक वस्तुएँ उद्‌भवित होती हैं । उसका हम आकलन नहीं कर पाते अथवा तो पृथक्करण भी नहीं कर पाते । किन्तु अनेक वस्तुएँ, अनेक घटनाएँ, अनेक प्रसंग, जीवन के अनेक रहस्य इसमें से उत्पन्न होते हैं और उसका हल भी नहीं होता है । यह जहाँ तक हम

पहुँच नहीं सकते वहाँ तक हम उसे स्पष्ट रूप से हमारे सामने खोलकर देख नहीं सकते क्योंकि हमारा मन, बुद्धि, चित्त, प्राण, और अहम् की ऐसी मुक्तावस्था हुई नहीं है । क्योंकि वह मन, बुद्धि, चित्त, प्राण और अहम् वहाँ चिपके पड़े हैं । वे जहाँ-जहाँ चिपके हैं उसमें से उसने मुक्तता का अनुभव नहीं किया है, यदि उसमें से मुक्तता अनुभव करें तो फिर अंतरमानस में उतर सकता है । इसलिए मन, बुद्धि, चित्त, प्राण और अहम् जहाँ जहाँ वे चिपके हैं वहाँ से, वहाँ होने पर भी उससे मुक्त हैं । ऐसा अनुभव जब तक न हो वहाँ तक अंतर-मानस को वह समझ नहीं सकता अथवा तो वहाँ तक वे पहुँच नहीं सकते। इसलिए हमारे मन, बुद्धि, चित्त, प्राण और अहम् जहाँ-जहाँ हैं वहाँ और वहीं रहे और वहाँ होने पर भी उससे मुक्त हैं वह जब अनुभव होता है, तब वह सबकोन्शियस माइन्ड को ठीक से समझ सकता है मुक्तावस्था आये बिना ये रहस्य भी समझ नहीं आते । यह बहुत आवश्यक है । इसलिए गुरु महाराज ने मुझे कहने के बाद यह सारी वस्तुएँ मुझे ख्याल में आने लगीं। उसके पश्चात्-बहुत समय बाद यह सब स्वतंत्र रूप से अनुभूति होने लगीं । **सचमुच सद्गुरु तो ऐसे होते हैं कि किसी को भी अपना गुलाम बनाने की इच्छा नहीं रखते ।**

(अन्वय-समन्वय, पृ. ७३-७४)

मृत्यु पश्चात् जीवात्मा की स्थिति

मनुष्य शरीर छोड़ता है उसके बाद उसे अपने शरीर के साथ तादात्म्यरूप जुड़े रहने के कारण शरीर के आगे-पीछे उसका जीव रहा करता है और तेरह दिन तक वह जीव जिस-जिस के साथ उसे काम है, लोभ है, मोह है, यह सब है और जिसके साथ, जिन-जिन लोगों के साथ जीवदशा से, उत्कंठा द्वारा जुड़ा है, वैसे वातावरण में वह तेरह दिन तक At the place of attachment, वह जीव वहाँ रहता है । **तेरह दिन तक वह व्यवहार नहीं कर पाता है किन्तु वह सुनता है, देखता भी है ।** वह सूक्ष्म देह उसे मिला होने पर भी वह तेरह दिन तक की उसकी जो दशा है वह इस प्रकार की है । **इसलिए ही, हम उन दिनों में उसके गुण विषयक, उसने उत्तम कार्य किये हों तो उनके विषय में, उसके उत्तम कर्म विषयक, यह सब हमें सोच-विचारकर करना चाहिए । शोक तो बिलकुल नहीं करना चाहिए । रोना तो बिलकुल भी नहीं चाहिए ।** किन्तु उन दिनों में जितनी हो सके प्रार्थना और शांतिकल्याण हो ऐसा भाव अथवा प्रार्थनामय भाव में सतत स्मरण करते हुए उत्तम कर्म करने में यदि हम उन दिनों को बितायें तो उसे अधिक शांति लगती है, अच्छा लगता है ।

हम रोते हैं, शोक करते हैं वह कोई उसके लिए नहीं, हमारे मन में उसके लिए जो मोह है, ममत्व है

उस ममत्व के कारण करते हैं । उसका ही यदि कल्याण हम चाहते हों, यदि उसे शांति प्राप्त हो ऐसा चाहते हों तो हम भिन्न रूप से आचरण करेंगे-ऐसा यदि हम में प्रत्यक्ष जागरूकता हो तो ।

तेरह दिन के पश्चात् जीव की गति-स्थिति

प्रत्येक जीव जब शरीर छोड़ देता है तब तुरन्त ही वह कहीं जन्म नहीं ले सकता । उसे तो बहुत समय लगता है । कुछ काल बीत जाता है और उस अवधि में वह अनेक जन्मों के बीते परिवेश को स्मरण करता है । अंग्रेजी में Period of assimilation की अवधि में, उस स्थिति में जीता है । अनेक जन्मों के अनुभवों को, स्मरणों को, संस्कारों को, प्रसंगों को अलग-अलग प्रकार के जन्म उसने जिस जिस प्रकार की योनि में लिए हों उन सब को यादकर Period of assimilation के चरण में होता है । उसमें से उसका स्वयं, सहज रूप से निश्चित होने पर और इसप्रकार मुझे इस जन्म में अनुभव लेना है और जिस प्रकार का अनुभव लेने का स्वयं, सहज रूप से निश्चित होता है । इस Period of assimilation में उस प्रकार के सानुकूल संयोगों में वह जीव जन्म लेगा । **पर जन्म लेने में तो बहुत काल बीत जाता है । उसका कोई निश्चित नियम नहीं है।**

प्रत्येक जीव के जिस प्रकार के संस्कार, जिस प्रकार

की जीवदशा की उसकी उत्कंठा, जिस प्रकार की जीवदशा, उसमें काम, क्रोध, लोभ, मोह और उसके विशेष प्रकार के अथवा तो कोई सत्त्व प्रकार का जीव हो, कोई उच्च प्रकार का जीव हो, किसी साधना में मुड़ चुका जीव हो और कुछ बाकी रह गया हो, ऐसे अनेक प्रकार के भिन्न-भिन्न जीव हैं । उसका जन्म बाद में अलग-अलग तरह से और अलग-अलग काल में होता है । अमुक काल में अमुक ही समय में अमुक ही निश्चित दिनों में मनुष्य जन्म ले ऐसा कोई नियम नहीं है । यह तो जीव जिस प्रकार का अनुभव लेना चाहता हो ऐसा होता है । इसप्रकार अनेक प्रकार के जीव अपने-अपने ढंग से अलग-अलग अनुभव लिया करते हैं-कभी श्रीमंत, कभी कोई किसान, कभी कोई मजदूर, कभी कोई स्त्री। इसप्रकार जीवन के अनेक चरण के भिन्न-भिन्न प्रकार के अनुभव लेने का कार्य जीव करता होता है ।

जब उसके Period of assimilation में अनेक रूप से स्मृतियों का अंत आ जाय तब सहज रूप से अब अमुक प्रकार के जीवन के अनुभव स्वयं लेना है, ऐसा स्वयं निश्चित हो जाय, तब वह अनुभव लेने के लिए जिन-जिन, ऐसे निमित प्रकार के जीवों का संयोग वहाँ होना हो ऐसे संयोग जहाँ सानुकूल बनता हो ऐसे संभावनावाले काल में और संयोगों में वहाँ जन्म ले, उस समय उसके साथ इन यादों की जुगाली से जो निश्चित

हुआ हो ऐसा स्वयं जो अनुभव लेना हो, उस अनुभव को अनुभव करने के लिए ही जो ऐसे दूसरे जीवों की आवश्यकता है, ऐसे जीव भी तब उस अवधि के दौरान ही जन्में ऐसी सानुकूल योग्यता जब प्राप्त हो, ऐसी योग्य गिनती हम नहीं कर पाते । ऐसी स्थिति में वह स्वयं ही सभी को योग्य प्रकार का समूहगत रूप में एक साथ सभी को जन्म लेना होता है, जिससे स्वयं जिस प्रकार का अनुभव लेने का सोचा हो ऐसा तो नहीं कह सकते। विचार किया हो ऐसा फलित होने के लिए जिन अंगउपांगों की आवश्यकता हो वे सभी ही तब एक साथ होते हैं।

संत-समागम से लाभ

एक साहब ने मुझे पूछा, '**अनुभवी पुरुष के सम्पर्क में आने से नया जन्म जल्दी होता है, यह बात सच है ?**' वे साहब अत्यधिक निजी थे । इसलिए सब कुछ छूट से पूछ सकते थे । मैंने उनसे कहा, 'उस बात की तुम फिर प्रूफ (प्रमाण) माँगोगे। उसे प्रमाणित करने मैं कहाँ जाऊँ ?' तो उसने मुझे कहा, 'नहीं, मुझे आप पर विश्वास है । आप कहेंगे उस पर मुझे श्रद्धा है।'

इसलिए मैंने कहा कि **ऐसे अनुभवी लोगों के साथ बहुत निकट के परिचय में सम्बन्ध में रहें तो जन्म पहले होता है,** यह बात निश्चित है । ऐसे तो

ट्रांजिशन पीरियड (मृत्यु पश्चात् जन्म लेने के बीच की अवधि का समय) बहुत लम्बा होता है। किन्तु ऐसे लोगों के निकट के सम्बन्ध में हो उसका जन्म पहले होता है। उसका प्रमाण-मेरी माँ है। (मेरी माँ का जन्म जल्दी हुआ था, उसका मैंने अनुभव किया था।)

यह एक लाभ है। हमारा जीव शरीर छोड़ जाय तब जो प्लेस ओफ एटेचमेन्ट (आसक्तिवाला स्थान) हो वहाँ वह रहा करता है। तेरह दिन तक तो उस स्थल का तथा अपने परिचितों के साथ रहता है। यह अनुभव की बात है। प्रयोगात्मक है। तेरह दिन पश्चात् उस पिंड को विलग करते हैं। ऐसी क्रिया आती है। विधि करने की होती है। उस पिंड को विलग करने के बाद उससे सम्बन्ध कम होता जाता है। इस प्रकार कम होते होते- वर्ष तक कितनों को तो इस पृथ्वी के साथ का सम्बन्ध रहता है। एक वर्ष पश्चात् पूर्णतः खत्म हो जाता है। किन्तु वर्ष तक तो रहता ही रहता है। जीवदशावाले के सम्बन्ध खत्म हो जाते हैं। तब वह बीच की मुद्दत का समय भी ऐसे लोगों के सम्बन्ध के कारण कम होता जाता है और इतना ही नहीं, उसके दूसरे जन्म में उसकी ऊर्ध्व गति होती है। पहले जन्म में तो न हो, क्योंकि उसे मिले अलग-अलग संस्कारों की प्रबलता इतने अधिक होते हैं और इन नये संस्कारों का प्रबल रूप जागा नहीं होता है। वह दूसरे जन्म में जागता है। इसलिए यह दो लाभ मैंने बतलाये।

स्वजन : श्रीमोटा, विज्ञान का जितना डेवलपमेन्ट (विकास) होता जाता है, उसमें आगे बढ़ी जो विभूति होगी वह सचमुच मदद करती होगी ?

श्रीमोटा : आध्यात्मिक जीवन के विकास में जो पुरुष आगे बढ़े हैं-जो जीव हैं, उनका मुझे अनुभव है। ऐसे कितने ही जीव इस वातावरण में भी हैं कि जिनके अपने मिशन के काम अभी समाप्त नहीं हुये हैं । ऐसे लोग ऐसे एप्टिट्यूट (व्यवहार) वाले होते हैं, उन्हें मदद करते हैं । इसका मुझे अनुभव है । पर विज्ञान का मुझे अनुभव नहीं है । ऐसा होने पर भी यदि यह थियरी (सिद्धान्त) उन्हें भी लागू करें तो विज्ञान में अंदर डूबे हुए, एकाग्र केन्द्रित हुए जीवों की शोध पूरी न हुई हो और शरीर छूट गया हो, वैसे लोग वातावरण में होने चाहिए और उसका योग्य माध्यम हो उसे वे ज्ञान देते हो, होना चाहिए । यह तो अनुमान की बात है । पर उसका तो मुझे अनुभव है ।

'शेष-विशेष,' प्र. आ. पृ. ६६-७०

प्रश्न : मृत्यु के समय भगवान का नाम स्मरण होने से मोक्ष की प्राप्ति होती है, यह तथ्यगत है ?

उत्तर : प्रश्न तो तुमने बहुत अच्छा किया है । मृत्यु के समय भगवान का स्मरण हो या स्मरण हुआ करे या याद आये तो उससे कोई मोक्ष नहीं मिलता । मोक्ष यों कोई इतना सारा सरल नहीं है । परन्तु मृत्यु के समय, शरीर छूटते हुए, शरीर में चेतन जब निकल

जाता है, जीव निकल जाता है, तब यदि भगवान का नाम लिया जाए तो उत्तम प्रकार की गति होती है। सद्भाववाली स्थिति में सामान्य जीव से कुछ उच्च गतिवाली स्थिति प्राप्त होती है, यह बात सत्य है। इसका कारण मैं तुम्हें बुद्धि स्वीकार कर सके इसतरह भगवान की कृपा से कह सकता हूँ।

शरीर के रोमरोम में से किसी प्रकार के चेतन की-जिसे 'एनर्जी' (energy) कहते हैं - कोई चेतन की शक्ति कहते हैं-ऐसी शक्ति रोमरोम में से निकलकर किसी एक स्थान शरीर के आधार पर केन्द्रित हो जाती है। उस शरीर के एक एक अवयव में से, एक-एक भाग में से, रोमरोम में से, उनके बाल में से भी-एक छोटे से छोटे भाग में से भी प्राणशक्ति, चेतन की प्राणशक्ति, आकर्षित हो एकत्रित होती हैं और यह वस्तु क्षण में घटित होती है। एक क्षण से भी कम क्षण में यह घटना घटित होती है, जो अपनी बुद्धि में आ सके ऐसी घटना नहीं है। पर उस समय घटित होनेवाला सचमुच का यथार्थ है। उस समय में शरीर में रहा चेतन तो पूर्णतः निकल गया होता है, तब इस शरीर की जो प्रकृति है, जो द्वन्द्व के गुणों से बनी हुई है यह, तब वह प्रिडोमिनन्ट (Predominant) विशेष रूप से भाग नहीं निभाती है। तब उसका यह स्थूल शरीर क्रियाशील नहीं होता है। पर तब इस शरीर से यह प्राण-प्राण की शक्ति, चेतन की-प्राण की शक्ति जब निकलती हुई किसी एक पल

में एक स्थान पर एकत्रित-केन्द्रित हो गयी होती है, हो जाती है, उस पल उसका स्थूल शरीर विशेष भाग नहीं लेता होता पर सूक्ष्म शरीर निकलने की प्रक्रिया में होता है और उस समय उसका सूक्ष्म शरीर ही 'प्रिडोमिनन्ट' अत्यंत महत्त्वपूर्ण भाग लेता है - शरीर में एक क्षण के लिए भी उस समय इस सूक्ष्म शरीर के आगे-शीर्षस्थ होता है । उस समय स्थूल शरीर महत्त्वपूर्ण नहीं होता, सूक्ष्म शरीर शीर्षस्थ होता है और जब सूक्ष्म शरीर शीर्षस्थ होता है उस समय भगवान का जो नाम लिया जाता है उसका आधार सूक्ष्म शरीर है, न कि स्थूल शरीर । मनादिकरण स्थूलता को नहीं छोड़ पाते हैं । स्थूल शरीर की प्रक्रिया-कामक्रोधादिक वृत्तियाँ आदि-महत्त्वपूर्ण भाग लेती रहती हैं । इससे सारे स्थूल शरीर से चेतन की प्राणशक्ति निकलकर सूक्ष्म शरीर में केन्द्रित हुई होती है और सूक्ष्म शरीर प्रमुख रूप से शरीर में से जीव निकलते समय शीर्षस्थ रहा करता है । जिस बेला में भगवान का नाम लिया जाता है उस समय सूक्ष्म शरीर के मन, बुद्धि, चित्त, प्राण, अहम् आदि का प्रकार कुछ अलग ही है । वह मन, बुद्धि, प्राण, अहम् आदि जो है वह यह स्थूल शरीर जब प्राणवान था और इससे सारी प्रक्रियाएँ चल रही थीं और उसे घेरे हुए जो मनादिकरण थे, इससे अधिक सूक्ष्म शरीर जब शीर्षस्थ होता है और सूक्ष्म शरीर के ही आधार पर यह मनादिकरण उस पल जो है उस प्रकार से और स्थूल शरीर के मनादिकरण स्थूल शरीर

को ही जकड़े हुए होते हैं, उन दोनों प्रकारों में बहुत अन्तर है । तब वह प्राण-चेतन की प्राणशक्ति शरीर से निकलने के पल में यह हमारा सूक्ष्म शरीर शीर्षस्थ होता है । उस सूक्ष्म शरीर को बोलने की पल में, उस समय जो सूक्ष्म शरीर है उसके द्वारा यह जो भगवान का नाम लिया जाता है उसके कारण उसकी अच्छी गति में अर्थात् इसके पश्चात के जन्म में वह कोई भावनाशाली स्थिति में वह जीव जन्म लेगा ऐसी संभावनायुक्त हो जाता है। या तो उसके दीर्घकाल का अभ्यास हो, ऐसे जीवों से भी उस समय भगवान का नाम उसे याद रहे ही ऐसा कोई नियम नहीं है । अपनेआप किसी को हो जाता है। जिसे बिलकुल अभ्यास नहीं है - जिसे अच्छी तरह अभ्यास नहीं है ऐसे मनुष्य को भी ऐसे मनुष्य को भी ऐसे सजग प्राणवान जिसमें चेतना की निष्ठा जागृत हुई हो ऐसे अनुभवी शरीरधारी आत्माओं के साथ संपर्क में आये हों अथवा तो उनका काम उन्होंने किया हो और बहुत-सा काम किया हो, एकाद कार्य नहीं, पर बहुत-सा काम किया हो, तो ऐसे और उसके ऊपर यदि उस महात्मा का राग हो अथवा तो उत्कट भाव उसके लिए दिल में हो तो ऐसे जीव को भी मृत्यु के समय भगवान का स्मरण रहता है और वह स्मरण केवल यह स्थूल शरीर जब जीवित होता है और वह बोलता है उससे अधिक जब सूक्ष्म शरीर शीर्षस्थ होता है और तब वह रोमरोम में से चेतन की प्राणशक्ति निकलकर किसी एक

स्थल पर केन्द्रित होती है । इस पल की भी पल के अंदर यह घटना घटित होती है । उस समय सूक्ष्म शरीर स्थूल शरीर से निकल जाने की एकदम तत्परता में होता है । पल पश्चात तो निकल ही जाता होता है, उस पल में यदि भगवान का नाम लिया जाता है, वह सूक्ष्म शरीर बोलता है । उस सूक्ष्म शरीर में भी आकाश, तेज और वायु तीन तत्त्व तब तैयारीवाले होते हैं । इसलिए सूक्ष्म से सूक्ष्म प्रदेश में उस भगवान का नाम उसके आधार में, यह एक बहुत बड़ी प्रक्रिया है उसमें ऐसे जीव की कोई अच्छी भावनाशाली गति के अंदर उसका जन्म होता है ।

(श्रीमोटा की टेप वाणी के आधार पर)

जीव की गति और कार्य

बस्ती बहुत बढ़ रही है उसका कारण बुद्धि स्वीकार कर सके ऐसा है । अंतिम दस वर्षों में बस्ती अधिक प्रमाण में बढ़ती जा रही है, बहुत वृद्धि हुई है, उसका कारण क्या है ?

अंतरिक्ष में, पृथ्वी के आसपास के वातावरण में असंख्य जीव हैं, जिनकी कोई गिनती नहीं हो सकती। असंख्य जीवों का अस्तित्व है उसे प्रमाणभूत नहीं किया जा सकता । उस समय ऐसे अचानक आने का, जन्म लेने का क्यों हुआ ? पहले क्यों नहीं जन्मे और अब

ही क्यों ? हमारी बुद्धि है यह प्रश्न उठाएगी ही ? तो उसका उत्तर यह है कि उदाहरण-१९१८ की साल में इन्फल्युएन्जा (रोग) आया था, पैंतालीस-छियालीस लाख मनुष्य मर गये थे । ये सारे जीव भी इस वातावरण में घूमा करते हैं। हमारे हिन्दुस्तान में स्वराज्य आया और विभाजन हुआ, तब हमारे एक ही प्रकार के एक ही इन्टेन्सिव सेन्टिमेन्ट (उत्कट भाव) में लाखों मनुष्य मारे गये थे । अब एक ही प्रकार के सेन्टिमेन्ट में मर गये, वह भी हैं । तब ऐसे लोग, ऐसे जीव अमुक वातावरण में, अमुक ऐसे क्लिष्टतावाले वातावरण में मर गये हैं। असंख्य लोग हमारी स्मृति में दुर्घटना के कारण मर गये। वे सभी एक ही प्रकार के कारण मर गये ।

अब वर्तमान काल क्लिष्टतावाला, घर्षणवाला आया है । हमारे हिन्दुस्तान में ही नहीं, पर सारी पृथ्वी पर यह घर्षणवाला, संघर्षवाला, अशांतिवाला, उलझनों से भरा, बेचैनीवाला काल आया है । उस अवधि में असंख्य जीव मर गये हैं और वातावरण में हैं । वे ऐसे ही काल में जन्म लेते हैं, उसे लेना ही पड़ता है। यह काल उनके लिए सानुकूल है । जैसा प्रेत है उस प्रेत को अपनी किसी इच्छा को तृप्त करनी हो, तो उसका योग्य मीडियम (माध्यम) को ही पकड़ेगा । तभी वह तृप्त हो पाएगा। इस तरह इस पृथ्वी के वातावरण में अलग-अलग काल खण्डों में अमुक लक्षणवाला काल आता है । उस

लक्षणवाले काल में, उसके अनुसार लक्षणवाले असंख्य जीव, उस तरह के लक्षण में, इन्टेन्सिटी-उत्कृष्टता में एकदम एकसाथ में जन्म लेते हैं । एक साथ जन्मे अर्थात् बस्ती बढ़ी । इसलिए या तो रोग आएगा, लड़ाई होगी और सभी समाप्त हो जाएँगे । फिर इसी प्रकार का पुनरावर्तन होता ही रहेगा। इस प्रकार बस्ती बढ़ती-घटती, बढ़ती जाती है । यह तो मेरे मन से मैंने समाधान लिया है। यह सच है कि नहीं, कह नहीं सकते। यह तो मुझे लगा था तब मेरे मन से मैंने समाधान किया था। किसी भी प्रश्न को मन में संग्रह करके मत रखो । ऐसा कोई न कोई समाधान कर डालना चाहिए । जिससे उसके विषय में मन सोचे ही नहीं । कोई भी संकल्प हुआ, विचार आया तो उसका मूर्त स्वरूप कर देना चाहिए । नहीं तो वही विचार दुबारा मन में घूमता रहेगा और अभी न होगा तो फिर दुबारा जागेगा। इसलिए कृपाकर उसे साकार कर दें । जिससे फिर न आवे ।

यह तो श्रीमान् हमें पता नहीं है कि अंतरिक्ष में ऐसे भी जीव हैं जो ज्ञान देनेवाले हैं । जिन्हें अनुभव नहीं हुआ, ऐसे मानव शरीर धारण करनेवाले हैं । एप्ट मीडियम (योग्य माध्यम) को खोजकर ज्ञान देते हैं । वह अ, ब, क, ड ऐसे ज्ञानवाले नहीं होते हैं । पर एक मीडियम होता है । उस अ, ब, क, ड को भी पता नहीं है । उसे बिलकुल ख्याल नहीं होता । यह

तो इसतरह होता नहीं । हमारी पृथ्वी के वातावरण में ऐसे भी जीव हैं । जैसे प्रेत अपने एप्ट मीडियम को स्वीकार कर उसके द्वारा अपनी वृत्तिओं को तृप्त करता है, इसप्रकार ऐसे प्रकार के भी जीव हैं कि जो ऐसे एप्ट मीडियम को खोजकर उसमें अपने को व्यक्त होने का प्रयत्न करते रहते हैं ।

स्वजन : पूज्य मोटा, ये तो अंतरिक्ष में जीव हैं वे पृथ्वी पर ही जन्म लें, ऐसा कुछ नहीं है न ? कहीं भी जन्म ले सकते हैं ?

श्रीमोटा : पृथ्वी के वातावरण के जीव पृथ्वी पर ही आते हैं । दूसरी जगह जाते हैं सही, पर वे दूसरे वातावरण में सीधे नहीं आते । जिस जीव ने उत्तम से उत्तम कर्म किये हों और भावात्मक कर्म किये हों ऐसे, ऊर्ध्व में दूसरे ऐसे प्रकार के जीवों की पृथ्वी है वहाँ जाते हैं । जो जीव पृथ्वी के वातावरण में अवतरित होने लायक हैं, वे ही पृथ्वी के वातावरण में रहेंगे । असंख्य जीव हैं - ऐसा हम कहते हैं सही । पर उसका प्रमाण नहीं दे सकते हैं । हमारे कन्सेप्शन (समझ) में नहीं ला पाएँगे । पर इतना तो हम देखते हैं कि हमारी पृथ्वी पर असंख्य जीवाणु हैं, यह तो हमारी बुद्धि स्वीकार करती है । इस तरह सारे वातावरण के अंदर ये जीव-शरीर छोड़े हुए असंख्य जीव-इस पृथ्वी पर हैं इनसे भी अधिक कई गुना हैं । और दूसरी पृथ्वी पर से हमारी पृथ्वी

पर जन्म लेनेवाले ये सीधे नहीं आएँगे । वातावरण में आने के बाद आते हैं । पहले वातावरण में आते हैं । वहाँ स्टेबिलाइज (स्थिर) होते हैं । वह वातावरण पृथ्वी का वातावरण है । पृथ्वी का पूरा गोला है । यह वातावरण अमुक मील तक है । इस वातावरण में वह स्टेबीलाइज होने के बाद ही यहाँ जन्म लेते हैं । उन्हें सूक्ष्म में गर्भ चाहिए । उस सूक्ष्म में गर्भ में आता है । उदाहरण- बड़ी बड़ी घटनाएँ घटनेवाली हों तो पहले वातावरण के सूक्ष्म गर्भ में अवतरण हुआ होता है । फिर यहाँ हुआ होता है । पहले वहाँ होगा । उस तरह दूसरे ग्रहों से पृथ्वी पर अवतरित होने लायक जो जीव हैं वे यहाँ आते हैं उसके पहले वातावरण में स्टेबीलाइज होते हैं। वातावरण में रहते हैं । स्टेबीलाइज होने के बाद यहाँ आते हैं। और हमारे यहाँ निम्न कोटि हों वे हमारे वातावरण में नहीं रहते । वह दुबारा उस प्रकार की पृथ्वी के वातावरण में जाता है । हमारे यहाँ ऊर्ध्व प्रकार के जो जीव होते हैं उन्हें जहाँ जानेवाले होते हैं उसी प्रकार के वातावरण में स्टेबीलाइज होते हैं । फिर वहाँ अवतरित होते हैं ।

(तद्रुप-सर्वरूप, पृ. ४६-५०)

स्वजन : मनुष्य योनि में जन्म होने के बाद निम्नयोनि में गति होती है ?

श्रीमोटा : यह मुझे समझ नहीं आता । मुझे अकारण लगता है । चौरासी लाख जन्म हैं । जीवजंतु

के अलग अलग परिवर्तन होते हैं । पर हमारा ऐसा नहीं है । मैं इतना अधिक दृढ़ अनुभव लिये मत का हूँ कि मनुष्य शरीर धारण करने के बाद दूसरी किसी योनि में नहीं जा सकते हैं । हाँ, उसके गुणधर्म आ सकते हैं पर शरीर तो मनुष्य का रहेगा । बकरे, भैंस, ऊँट, गधे जैसे सभी गुण आएँगे सही । पर शरीर तो मनुष्य का ही रहेगा ।

(अन्वय-समन्वय, पृ. ३-४)

हमसे दूसरा कुछ साधन न हो तो कुछ नहीं पर ऐसे (अनुभवी) लोगों के साथ संगयुक्त दिल का मेल रखा हो तो बहुत है । इसका कारण मैं अधिक नहीं समझाता हूँ क्योंकि बहुतों को ऐसा लगता है कि ये अपनी महत्ता बढ़ाने के लिए कहता है पर मेरे मन से यह रेशनल (बुद्धि से समझ में आ जाय ऐसा) है । तथापि मैं आगे की बात किसी को नहीं करता हूँ । संग सें दिल का मेल और साधना करे तो काल एकदम संक्षिप्त होता है। साधना न करे तो भी मात्र संग से दिल का मेल कर दे तो दो जन्मों में काम निपट जाता है । इतना अंतर है । दिल का संग हुआ हो तो दूसरे जन्म में तत्काल निपट जाता है ।

यदि केवल अकेली साधना ही करे पर उसके (अनुभवी के) साथ दिल की रंगीली एकदिल से संग न हो तो उसे अधिक संघर्ष करना पड़ता है और कितने

ही जीवों की साधना दूसरे जन्म में रुक जाती है, दुबारा संसार में रचपच जाते हैं । दूसरे आठ दस जन्म निकल जाते हैं । पुनः उसके संस्कार जागते हैं पर दिल का संग हुआ हो तो ऐसा नहीं होगा ।

(अन्वय-समन्वय, पृ. ९०)

दिल लगे बिना यह सब नहीं होगा । दिल लगे तब दूसरी बात है । 'अ' सामान्य संसारी है । 'ब' के बीच दिल मिला है, किसी निमित्त के कारण 'ब' और 'अ' की याद आये तो 'ब' के आंदोलन 'अ' के पास जाते हैं । तब 'अ' और 'ब' का दिल मिला होने से उस आंदोलन को पकड़ता है । कितनी ही बार यह प्रक्रिया रिस्पोन्सिव और रिसेप्टिव दोनों होती हैं । इसलिए यह सब सरल है ऐसा बुद्धि स्वीकार करती है तब भी उस अनुसार कोई आचरण नहीं कर पाता ।

शरीर से प्राण निकल जाँय तब सूक्ष्म शरीर जाते हुए अनेकों ने देखा होता है । उस शरीर का माप (अंगूष्ठ) जितना भी कहीं दिया गया है । सूक्ष्म शरीर को 'लेन्थ या ब्रेड्थ' (लंबाई या चौड़ाई) जैसा कुछ नहीं है । वह आकार जो दिखता है वह हमारी स्थूल आँखों से नहीं दिखेगा । सूक्ष्म का आकार जैसा दीखता है वह तो पृथ्वीतत्व है । जो सारा स्थूल स्वरूप में दिखता है वह जल और पृथ्वीतत्व के कारण ही है । सूक्ष्म में तो बीज रूप ही है ।

हम नहीं जानते पर जो सब्लीमेशन की स्थिति में होंगे अथवा तो जुगाली की स्थिति में होते हैं तब कुछ काल बीत जाता है । पृथ्वी पर एक मनुष्य सत्तर वर्ष जीया तो उसके सूक्ष्म शरीर को जन्म लेते दो सौ ढाई सौ साल बीत जाते हैं । मात्र अनुभवी को ही काल अवरोध नहीं बनता । उसे जन्म लेना हो तब ले सकता है अथवा तो किसी मनुष्य को उच्च प्रकार की ऐसी अभिलाषा हो तो ऐसा जीव पहले शरीर धारण कर सकता है । इससे उल्टा यदि वह निम्न प्रकार के वृत्तिवाला हो तो उसका नया शरीर नहीं बन पाता, इसलिए वह प्रेत होता है ।

(जोडाजोड, पृ. ३७-३८)

(शार्दूलविक्रीडित)

कैसी लीला रची है पलपल मृत्यु और जन्म की !
उसके इस घटनाचक्र में बनता उस विश्व का कैसा खेल !
उसमें जीव खेला करे, पर सही भान न होता उसे,
कैसे स्वयं बहा करे प्रकृति से कोई न वहाँ जागता ।

– श्रीमोटा

मृतात्मा के कल्याण के लिए प्रार्थना

(व्यक्तिगत रूप से या कुटुम्ब के सदस्यों के साथ मिलकर सुबह-शाम सोलह दिन तक की जानेवाली प्रार्थना । कम

से कम ३० मिनिट करनी चाहिए । स्थल और समय निश्चित रखने चाहिए।)

(शिखरिणी-मंदाक्रांता)

गयी आत्मा को मन-हृदय से दें शांति पूरी,
सभी तरह से उसका प्रभु ! करें सर्व कल्याण श्रीजी,
सभी जीवों के साथ गत जीवन में जो बना संबंध,
कर डालें उसे सभी की ओर से पूर्ण निश्चित-मुक्त ।

(जीवन रंगत, प्र. आ. पृ. ११)

- श्रीमोटा

पूज्य श्रीमोटा को मिले संत पुरुष

१. पूज्य जानकीदास महाराज, पेटलाद
२. पूज्य गोदडिया महाराज-स्वामी प्रकाशानंद, नडियाद
३. पूज्य सरयुदासजी महाराज, अहमदाबाद
४. पूज्य महात्मा गांधीजी
५. पूज्य नर्मदा तट के रणछोड़दासजी मंदिर के महाराज
६. पूज्य बालयोगीजी अवधूत, अहमदाबाद
७. पूज्य नाथुरामजी 'मगरमच्छ', डाकोर
८. पूज्य केशवानंद धूणीवाले दादा, सांईखेडा
९. पूज्य उपासनी महाराज, नडियाद तथा साकोरी
१०. पूज्य गोदावरी माताजी, साकोरी
११. पूज्य गंगेश्वरानंदजी 'प्रज्ञाचक्षु', वेद मंदिर, अहमदाबाद
१२. पूज्य विद्यानंदजी महाराज, गीता मंदिर अहमदाबाद
१३. पूज्य स्वामी अखंडानंदजी, अहमदाबाद
१४. पूज्य जानकीदासजी महाराज, संतराम मंदिर, नडियाद
१५. पूज्य कविसागर, सरखेज
१६. पूज्य रंगअवधूतजी, वडोदरा कोलेज में तथा आध्यात्मिक मित्र
१७. पूज्य महात्मा-हिमालय में बर्फ की गुफा में बैठे थे
१८. पूज्य अघोरीबाबा, हिमालय में
१९. पूज्य स्वामी आनंद, हरिजन आश्रम, अहमदाबाद
२०. पूज्य केदारनाथजी, हरिजन आश्रम, अहमदाबाद
२१. पूज्य विनोबाजी, हरिजन आश्रम, अहमदाबाद
२२. पूज्य नग्न साधु-सांई ने दिए मंत्र गुरु महाराज की निश्रा में करने, बनारस
२३. पूज्य ओलिया, करांची रोड़ पर रहते, करांची

२४. पूज्य सांईबाबा-समुद्र में चलने, रोजा बीचोंबीच तोड़ना, नग्न होकर करांची रोड़ पर घूमना, १९३९ में काली चौदश की रात्रि को जीवन मुक्ति का मंत्र देनेवाले ।
२५. पूज्य कृष्णमूर्ति, महान तत्त्वचिंतक, करांची
२६. पूज्य राजाराम मस्त गांडा महाराज, कानपुर
२७. पूज्य गुरुदयाल मलिकजी, अहमदाबाद
२८. पूज्य दासानुदास दासजी महाराज
२९. पूज्य नानचंदजी महाराज (जैनमुनि), अहमदाबाद
३०. पूज्य योगीबाबा, गंगा नदी के किनारे नग्न स्वरूप में रहते
३१. पूज्य केवलानंदजी महाराज, पू. मोटा के गुरुभाई
३२. पूज्य कृष्णानंदजी महाराज, भादरण
३३. पूज्य मुक्तानंद बाबा, गणेशपुरी
३४. पूज्य आनंदमयी माताजी
३५. पूज्य विमलाताई ठकार
३६. पूज्य रमणमहर्षि
३७. पूज्य सच्चिदानंद स्वामी, दंताली
३८. पूज्य दिलीपकुमार रोय-श्री अरविन्द के शिष्य, पूना
३९. पूज्य इन्दिरादेवी-श्री अरविन्द के शिष्य, पूना
४०. पूज्य स्वामी विमलानंदजी, रामकृष्ण मिशन, पूना
४१. पूज्य डोंगरेजी महाराज
४२. पूज्य नारायणदासजी महाराज, संतराम मंदिर, नडियाद
४३. पूज्य नारायण स्वामी, हिमालय
४४. पूज्य सत्य सांईबाबा
४५. पूज्य योगीजी बापा
४६. संत श्री बालजी
४७. पूज्य योगेश्वरजी महाराज, सुरत
४८. पूज्य स्वामी सावलीवाला, सावली

४९. पूज्य मुगटराम महाराज, जंबुसर
५०. पूज्य स्वामी चिदानंदजी, मुंबई
५१. पूज्य अवधूत पुरणदासजी महाराज, हृषीकेश
५२. पूज्य शिवराम शर्माजी गायत्रीवाळा, वडोदरा
५३. पूज्य मासवैश्वरी माताजी पू. योगेश्वरजी का शिष्या
५४. पूज्य जैनमुनि जीनचंद्रजी महाराज, सुरत

(गुजरात विद्यापीठ अहमदाबाद)

पूज्य श्रीमोटा दूसरे अनेक साधुओं तथा संतों को मिले किन्तु उसकी सूची प्राप्त नहीं है ।

श्री मोटा के तीन विषयों पर विचार, अलग अलग पुस्तकों से चुन चुनकर; मुमुक्षु, जिज्ञासु, श्रेयार्थी स्वजनों-सभी को सरलता से उपलब्ध हों इस उच्च उद्देश्य से प्रारंभ किया है। अधिक 'रसपान', 'मंथन' के लिए श्रीमोटा के असली पुस्तकों का 'मनन' ही श्रेयस्कर है । भूलचूक के लिए क्षमायाचना के साथ ।

- बाबूभाई रामी

हरिः ॐ

आरती : पूज्य श्रीमोटा

हिन्दी पदयमें भावानुवाद

ॐ शरण चरण की ले लो,
प्रभुजी शरण चरण की ले लो,
अधम उद्धार करो जी (२),
कृपा दृष्टि दे दो... ॐ शरण ॥

मन, वाणी और भाव,
मेरे कर्मो में उतरे (२) प्रभुजी...
भाव-कर्म की ऐकता (२),
जीवन में करदो... ॐ शरण ॥

दिल में रहे सद्‌भाव सदा,
जो मुझे मिल जावे (२) प्रभुजी...
हो अपमान मेरा कदाचित् (२),
फिर भी प्रेम बढो... ॐ शरण ॥

बुरे विचारों औ भावोंका,
उर्ध्वकरण करने (२) प्रभुजी...
सदा ही दिल यह तड़पे (२)
प्यार तेरा पीने... ॐ शरण ॥

मन के सभी विचार,
अरु प्राणों की वृत्ति (२) प्रभुजी...
बुद्धि की सब शंका (२),
चरणों में लीन करो... ॐ शरण ॥

जैसा भी मैं तेरा,
मेरे दंभ को दूर करो (२) प्रभुजी...
सहज सरल यह जीवन हो (२)
यह सद्‌भाव भरो... ॐ शरण ॥
दिल से होऊँ जैसा,
वैसा ही बाहर रहुं (२) प्रभुजी...
पाखंड न हो जीवन में (२),
सत्य की और बढ़ूं... ॐ शरण ॥
सद्‌गुण और सद्‌भाव में,
दिल मेरा सदा रहे (२) प्रभुजी...
सद्‌गुण भाव औ भक्ति (२),
दिल में बहती रहे... ॐ शरण ॥
मन मति प्राण मेरे,
तेरे प्यार में गल जावें (२) प्रभुजी...
दिल में तेरी भक्ति (२),
हरदम लहरावें... ॐ शरण ॥

॥ हरिः ॐ ॥

आरती का भावार्थ

पूज्य श्रीमोटा रचित आरती का भावार्थ :

ॐ कार रूप है प्रभु ! मैं तेरी शरण में आया हूँ, मुझे तेरे चरणों में ले ले, मैं पतित तेरे द्वार पर आया हूँ, मेरा उद्धार कर, मुझे बचा ले, मुझे तूँ अपने हाथों से उठाकर

अपने हृदय से लगा ले । ॥ध्रुव॥

हे प्रभु ! मेरे मन में और वाणी में भाव निर्माण होकर वह भाव मेरे कर्मो में प्रगट होने दे और मेरा मन, वाणी और हृदय इन तीनों को तूँ अपनी कृपा से एक कर ।... ॐ शरण चरण... (१)

हे प्रेम ! मुझसे मिलने आनेवाले हर एक के प्रति मेरे हृदय में सद्भाव ही उत्पन्न होने दे, और जहाँ (जिनसे) अपमान हुआ हो, वहाँ भी (उनके प्रति भी) मेरे अंतर में भाव की ही वृद्धि होने दे। ...ॐ शरण चरण... (२)

मेरे अंतर में रही हुई निम्न प्रकार की वृत्तियों का उर्ध्वगमन करने के लिए, हे प्रभु, तेरी कृपाशक्ति के बल से ही मैं पुरुषार्थ करके उसके द्वारा तेरे चरणों में शरणागति स्वीकार सकूँ ऐसा कर । ... ॐ शरण चरण... (३)

हे प्रभु ! मेरे मन में रहे हुए सब बिकार, प्राण में से बहनेवाली सब वृत्तियाँ और बुद्धि में निर्माण होनेवाली सब शंकाएँ तेरे चरणकमलों में गल जाएँ, ऐसा कर । ...ॐ शरण चरण... (४)

हे प्रभु ! 'मैं जैसा हूँ वैसा' खुद-स्वयं को देखने के लिए, स्पष्ट रूप से परख लेने के लिए, मेरी बुद्धि खुली (रिक्त) कर । ...ॐ शरण चरण... (५)

हे प्रभु ! मेरे हृदय में तूँ जो चैतन्यरूप में भरा हुआ है, उसकी प्राप्ति के लिए जीवन में आचरण हो, और चैतन्य से दूर ले जानेवाला-निम्नगामी ऐसा आचरण मुझसे न हो,

ऐसी बुद्धि तूँ मुझे देना । ...ॐ शरण चरण... (६)

हे प्रभु जहाँ-जहाँ गुण और भाव है, वहाँ वहाँ मेरा हृदय स्थिर होने दे और उन गुणों के प्रति और उन भावों के प्रति मेरे हृदय में भक्ति का संचार होने दे । ...ॐ शरण चरण... (७)

हे प्रभु ! तेरे प्रति उत्पन्न हो गये हुए 'भाव' में मेरा मन, बुद्धि और प्राण, ये सब पिघल जाने दे और हृदय में तेरी ही भक्ति की बाढ़ आने दे । ...ॐ शरण चरण...(८)

-मोटा

॥ हरिः ॐ ॥

'हरिः ॐ'

पूज्य श्रीमोटा

चूनीलाल आशाराम भगत (श्रीमोटा) का जन्म भाद्रपद कृष्णपक्ष चतुर्थी, संवत १९५४ ई. स. ४-९-१८९८ को सावली गाँव में हुआ था। पिता का व्यवसाय रंगरेजी का था। व्यापार में घाटा होने से कालोल में स्थानांतर किया। बचपन दारुण गरीबी में बीता और घर में मददरूप होने ईंटवाड़ा में मजदूरी की। विपरीत संयोगों में शाला की शिक्षा पूरी करने के पश्चात् वडोदरा कॉलेज में प्रवेश प्राप्त किया, परंतु देशप्रेम से देशभक्ति के रंग में रंगे। गांधीजी के आदेश पर कॉलेज छोड़ी, **हरिजन संघ में सेवा की प्रतिज्ञा की**। अत्यंत गरीबी, हरिजन सेवक संघ के काम का बोझ संघ चलाते हुए पैसों की कमी, सवर्णों और हरिजनों के बीच सतत संघर्ष आदि के कारण मृगी का असाध्य रोग हो गया। अंत में हारकर नर्मदा मैया की गोद में आत्महत्या के विचार से कूदे किन्तु चमत्कारिक बचाव हुआ; रणछोड़जी के मंदिर के एक साधु ने 'हरिः ॐ' नाम का रटन करने के लिए कहा। गांधीजी और 'आध्यात्मिक माँ' प्रभाबा की सलाह मानकर नाम रटते-रटते मृगी का रोग मिट गया। जिससे उत्साहित होकर सर्पदंश निमित्त नामस्मरण का अजपाजप तक पहुँचाया। **प्रभु (चेतन) को पाने की ज्वलंत ज्वालामुखी जैसी तीव इच्छा को साकार**

करने पूज्य श्री बालयोगीजी, पूज्य केशवानंद धूणीवाले दादा, पूज्य उपासनी महाराज, पूज्य सांईबाबा जैसे सद्‌गुरुओं की मदद से प्रखर साधना की । जिसमें नामस्मरण, रात्रि स्मशानवास, धुँआधार की गुफा में वास, चौसठ प्रज्वलित उपलों के बीच वास, स्वयं के ही मलमूत्र पर गुजारा आदि का समावेश होता है । कठिन साधना और गुरुदेव के आशीर्वाद के फलस्वरूप **१९३४ में तेजोमय कृष्ण के साकार दर्शन हुए और पूज्य सांईबाबा की प्रेरणा आशीर्वाद से १९३९ में रामनवमी के दिन निराकार का साक्षात्कार हुआ,** फलस्वरूप **''मैं सर्वत्र विद्यमान हूँ''** के भाव रहने से गुरुजी की प्रेरणानुसार समग्र जगत में मौलिक ऐसे 'मौन आश्रमों' की कुंभ कोणम्, नडियाद तथा सूरत स्थान में स्थापना की, १९६२ से **''मुझे समाज को सुदृढ़ करना है''** के ध्येय के साथ **समाज में गुण भाव बढ़े ऐसी प्रवृत्तिओं को किया ।** जैसे शालाओं के कक्षों का निर्माण, संशोधन करने, शौर्य, साहस, पराक्रम, साहित्य, व्याकरण, सर्वज्ञान संग्रह, वृक्षारोपण आदि के लिए दान दिये ।

ता. २३-७-१९७६ के दिन मात्र छः व्यक्तिओं की उपस्थिति में फाजलपुर फार्म में इच्छामृत्यु वरण किया।

पूज्य श्रीमोटा को मिले हुए श्रीसद्‌गुरु

श्रीबालयोगीजी

श्रीकेशवानंद धूणीवाला
(दादा)

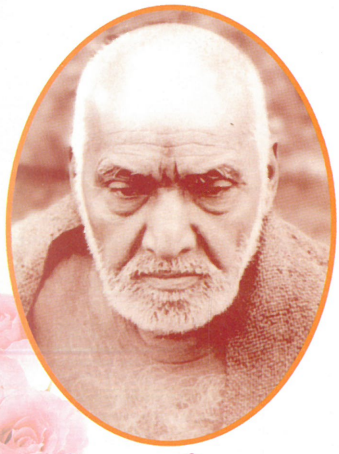

श्रीउपासनी बाबा

श्रीसांईबाबा

हरि:ॐ आश्रम-नडियाद, पूज्य श्रीमोटा की बैठक

हरि:ॐ आश्रम-सुरत, पूज्य श्रीमोटा की बैठक

हरि:ॐ आश्रम-कुंभकोणम् (दक्षिण भारत)